अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-42, अंक-01, 16-31 अगस्त, 2018

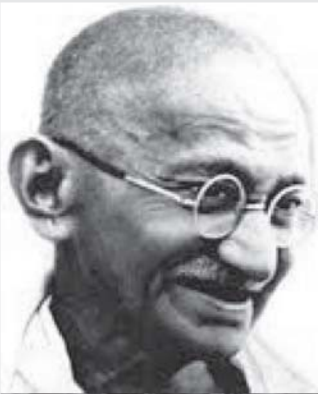

कश्मीर

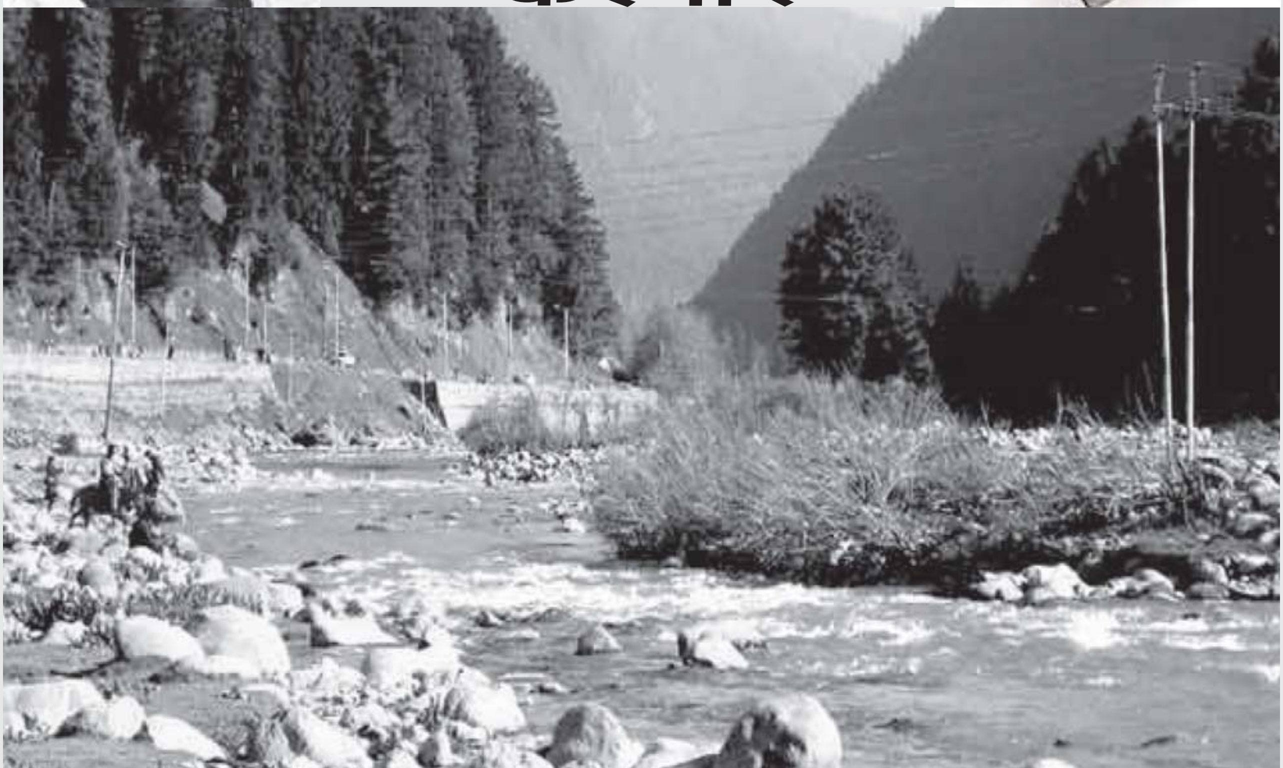

"कश्मीर हमारे धर्म-निरपेक्ष मूल्य के लिए बेहतरीन उदाहरण है। यही कश्मीर जो भारतीय धर्मनिरपेक्षता का उदाहरण है, हिन्दू साम्प्रदायिकता की घृणित तरक्की का निमित्त बना। यह सब राष्ट्रवाद की आड़ में हो रहा है। भारत एक हिन्दू बहुल देश है, ऐसे में भारतीय राष्ट्रवाद की आड़ में हिन्दू साम्प्रदायिकता का उभार कठिन नहीं है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जो भी लोग धर्मनिरपेक्षता में यकीन रखते हैं, वे इसकी रक्षा करें।"

- जयप्रकाश नारायण

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 42, अंक : 01, 16-31 अगस्त, 2018

संपादक
अशोक मोती
फोन : 0542-2440223

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. भारत विभाजन और कश्मीर का... 2
2. गांधीजी के साथ यरवदा जेल में... 4
3. कश्मीर का मसला और उसका... 6
4. कश्मीर : पुनर्चिन्तन की आवश्यकता... 9
5. कश्मीर का समाधान : कश्मीरियत... 13
6. कश्मीर को राजनीतिक समस्या के... 14
7. उपन्यास - 'बा' 16
8. गतिविधियां एवं समाचार... 18
9. कविता... 19

संपादकीय

भारत विभाजन और कश्मीर का विलयन

गांधी, विनोबा और जयप्रकाश एवं भारत की विभिन्न सरकारों ने भले ही कितनी कोशिशें की हों लेकिन 1947 के भारत विभाजन काल से कश्मीर की समस्या सुलझने का नाम ही नहीं ले रही। कश्मीर की समस्या दरअसल है क्या? क्या कश्मीर का भारत में विलय ही समस्याओं की जड़ में है, इन्हें अभी तक सुलझाने के बजाय शायद उलझाने की कोशिशें हुई हैं? चाहे वह कांग्रेस की सरकार हो या और किसी पार्टी की सरकार सत्ता पर काबिज होने की रणनीति के इर्द-गिर्द ही घूमती रही है, जिसे हम क्या किसी लोकतांत्रिक सरकार की ईमानदार कोशिश कह सकते हैं? कश्मीर की समस्याएं इस बात से नहीं उलझती गयी हैं कि लोकतंत्र में विश्वास करने वाली सरकारों ने भी बंदूक और हिंसा की ताकत से राज चलाने की कोशिशें की हैं। आखिर जिन छात्रों-युवाओं के हाथों में कलम और किताबें रहनी चाहिए, उनके हाथों में पत्थर और बंदूकें क्यों आ जाती हैं। भारत की कमी इस बात से झलकती है कि कश्मीर में हमने लोकतंत्र को मजबूत करने की न तो कोशिश की है और न ही बड़े पैमाने पर लोक भागीदारी से लोककल्याण का काम ही किया है।

कश्मीर के विलय के इतिहास में सच्चे हृदय से जायें तो यह स्पष्ट है कि महाराजा पाकिस्तान संघ में जाने को तैयार थे। अंदर से कई कोशिशें हो चुकी थीं। मुस्लिम बहुल कश्मीर में हिन्दू-मुस्लिम कार्ड भी खेला जा रहा था। कश्मीर के भारत में विलय में श्री शेख अब्दुल्ला, पटेल और नेहरू ने पाकिस्तान की सारी व्यूहरचना न केवल विफल की बल्कि राज्य में जम्हूरियत और लोकतंत्र की स्थापना में बड़ा योगदान किया। फिर भी आखिर कश्मीर का भारतीय संघ में विलय होने का मार्ग कैसे प्रशस्त हुआ? निःसंदेह सर्वश्रेष्ठ योगदान था बहुसंख्यक मुस्लिम आवाम के नेता शेख अब्दुल्ला का। राजा हरि सिंह तो डरे-सहमे थे और ढुलमुल नीति अख्तियार करते हुए भारतीय संघ में मिलने को मजबूर हुए। किन्तु कश्मीर की बहुसंख्यक मुस्लिम आबादी के प्रतिनिधि के रूप में शेख अब्दुल्ला यदि भारत में विलय से राजी न होकर पाकिस्तान जाने का निर्णय करते तो क्या कश्मीर का भारत में विलय किसी तरह संभव था, नहीं। विलय के पीछे निःसंदेह भारतीय संघ की धर्म-निरपेक्ष छवि का आकर्षण था और पाकिस्तान मुस्लिम लीग के षड्यंत्र को विफल करने की शेख अब्दुल्ला की शक्ति थी।

लार्ड बेवेन ने तो अपनी चाल चल ही दी थी। किन्तु लार्ड माउण्टबेटेन तथा प्रधानमंत्री नेहरू के अनुरोध से भारत सरकार ने यह सार्वजनिक घोषणा की थी कि राज्य के सम्मिलन की स्वीकृति इस शर्त के अधीन है कि जब राज्य आक्रमणकारियों से सर्वथा मुक्त कर दिया जायेगा, उसमें परिस्थितियां जब सामान्य हो जायेंगी, उस समय संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्त्वावधान में भारत के साथ राज्य के सम्मिलन के प्रश्न पर जनता की इच्छा का निश्चय कर, किया जायेगा। सरदार और नेहरू दोनों इस बात के लिए उत्सुक थे कि जम्मू-कश्मीर राज्य भारत के साथ ही जुड़ा रहे और राज्य की जनता को यह महसूस कराया जाय कि भारत के साथ रहने में ही

उसका भविष्य सुरक्षित है। उस समय शेख अब्दुल्ला इस प्रयत्न में पूरी तरह सहमत थे और अंततः इस प्रयास में निर्णायक भाग भी लिया। सरदार उस समय राजनीतिक दृष्टि से सारे राजा-महाराजाओं से वार्ताएं चला रहे थे इसलिए उन्हें अपनी शक्ति ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था करने में लगानी थी, जिससे शासन में लोकतांत्रिक सिद्धांत दाखिल करने के साथ-साथ महाराजा की प्रतिष्ठा की भी रक्षा हो सके। इस नीति के साथ सुसंगत रहकर राज्य की बहुसंख्यक आबादी के निश्चित नेता शेख अब्दुल्ला को राज्य के आपातकालीन शासन का मुखिया बनाया गया ताकि यहां एक वैधानिक तंत्र स्थापित हो सके।

शेख अब्दुल्ला ने तो 1932 में ही लोकप्रिय आंदोलन चलाया था, जो प्रारंभ में कौमी आंदोलन था, जो मुसलमानों के हित की लड़ाई लड़ने के लिए संगठित किया गया था और जिसका नाम अखिल जम्मू तथा कश्मीर मुस्लिम कान्फ्रेंस था, किन्तु 1939 में इसका कौमी स्वरूप खत्म कर दिया गया और फिर उसका नाम नेशनल कान्फ्रेंस रहा और जिसे आगे चलकर अखिल भारतीय देशी राज्य परिषद, जिसके अध्यक्ष नेहरू थे, के साथ जोड़ दिया गया। 1946 में कांग्रेस आंदोलन से प्रेरणा लेकर शेख ने महाराजा के विरुद्ध 'कश्मीर छोड़ो आंदोलन छेड़ दिया था, जिसके तहत शेख को तीन साल जेल में रहनी पड़ी। इसी क्रम में नेहरू भी कश्मीर प्रवेश करने के दौरान गिरफ्तार कर लिये गये।

जून 1947 में भारत विभाजन योजना की घोषणा के बाद कश्मीर में लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम करने के साथ पटेल ने कश्मीर को जोड़ने वाली पठानकोट से श्रीनगर सड़क का तेजी से निर्माण कराया। सरदार का सबसे बड़ा योगदान संविधान में अनुच्छेद 370 का जुड़वाना था, जो भारत के साथ कश्मीर राज्य के संबंध की व्याख्या करता है। इन सारे कार्य का संचालन गोपाल स्वामी आयंगर ने शेख अब्दुल्ला तथा उनके मंत्रिमंडल के साथ सलाह-मशविरा करके नेहरू के समर्थन से किया। नेहरू तो अमेरिका में थे, पर कांग्रेस भी इसका विरोध कर रही थी, लेकिन सरदार पटेल की कुशलता और सूझबूझ के कारण संविधान सभा में इस अनुच्छेद का विरोध नहीं हुआ। इतना ही नहीं जब आयांगर ने पार्टी द्वारा स्वीकृत अनुच्छेद के मशविदे में कुछ फेर-बदल किया तो सरदार ने कड़ाई से ऐतराज किया—''जब हमारी पार्टी कांग्रेस ने शेख अब्दुल्ला साहब हाजिरी में सारी व्यवस्था को स्वीकार कर लिया है, तो उसके बाद उसमें परिवर्तन करना मुझे बिल्कुल पसंद नहीं है।'' इस तरह कश्मीर का सुविचारित शर्तों के साथ भारतीय संघ में विलय हुआ, किन्तु यह आज तक राज्य अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से जुड़ा है क्योंकि यह संयुक्त राष्ट्रसंघ की कार्यसूची में है और पाकिस्तान समय-समय पर कम या अधिक हिंसा तथा तीव्रता से इस मसले को उठाता रहता है।

यह दुःखद है कि विगत दो-तीन वर्षों में कश्मीर समस्या को सरकार राजनीतिक मुद्दा मानती ही नहीं। इसने धारा 370 से भी छेड़छाड़ शुरू की है। हिन्दुत्ववादी एक एनजीओ द्वारा उच्चतम न्यायालय में अनुच्छेद 35ए को भी खत्म करने के लिए एक याचिका दायर की गयी है, जो सदैव राज्य का विषय रहा है और जिसका निर्धारण महाराजा के शासनकाल में हुआ था और 1927 व 1932 में अधिसूचित हुए थे। अभी तक राज्य में चल रही भाजपा वीडीपी सरकार ही सत्ता में नहीं है। 15 अगस्त 2017 को देश के प्रधानमंत्री द्वारा लालकिला की प्राचीर से यह स्वीकारने के बाद कि कश्मीर समस्या का समाधान न तो गाली से होगा, न ही गोली बल्कि कश्मीरियों को गले लगाने से होगा। इस उद्बोधन बाद भी भाजपा अध्यक्ष और देश के रक्षामंत्री आदि के बयान आये हैं, जो इस बात को दर्शाते हैं कि कश्मीर की आवाम से संवाद अवरुद्ध है और कश्मीर को सेना के हवाले कर दिया गया है।

कश्मीर के जिस मसले का निस्तार ब्रिटिश वायसराय, स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक सरकार के प्रमुख नेता नेहरू, पटेल, राजेन्द्र प्रसाद की सूझबूझ से संभव हुआ, उसे किसी गहरे सोच के बगैर तथा कश्मीर के विलय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का नकार कर कैसे किया जा रहा है?

गांधी, विनोबा और बाद में जयप्रकाश जी ने कश्मीर पर चिन्तन से कश्मीर समस्या का स्पष्ट निदान हमें सुझाया है—1. भारत कश्मीर को भारतीय संघ से अलग होने पर कभी राजी नहीं हो सकता, 2. कश्मीर के स्वतंत्र राज्य बनने की संभावना भी निर्मूल है, जहां पाकिस्तान कश्मीर घाटी को हड़पने की इच्छा रखता हो और चीन उस क्षेत्र में अपनी ताकत बढ़ाता हो।

इसलिए जेपी का स्पष्ट मत है कि कश्मीर को पूर्ण आंतरिक स्वायत्ता बनाने का प्रयास होना चाहिए, बशर्ते इस स्वायत्तता को धीरे-धीरे कम न किया जाय तथा राज्य के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप भी न किया जाय।

इसलिए सरकार, सर्वोदयी और सभी गांधीजनों को जेपी के इसी प्रयास को आगे बढ़ाना चाहिए। जेपी का कश्मीर के संबंध में आवाहन स्पष्ट है—''कश्मीर हमारे धर्म-निरपेक्ष मूल्य के लिए बेहतरीन उदाहरण है। यही कश्मीर जो भारतीय धर्मनिरपेक्षता का उदाहरण है, हिन्दू साम्प्रदायिकता की घृणित तरक्की का निमित्त बना। यह सब राष्ट्रवाद की आड़ में हो रहा है। भारत एक हिन्दू बहुल देश है, ऐसे में भारतीय राष्ट्रवाद की आड़ में हिन्दू साम्प्रदायिकता का उभार कठिन नहीं है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जो भी लोग धर्मनिरपेक्षता में यकीन रखते हैं, वे इसकी रक्षा करें।''

–अशोक मोती

21 अगस्त : काका कालेलकर पुण्य-तिथि : विनम्र नमन्

'गांधीजी के साथ यरवदा जेल में'

❑ काका कालेलकर

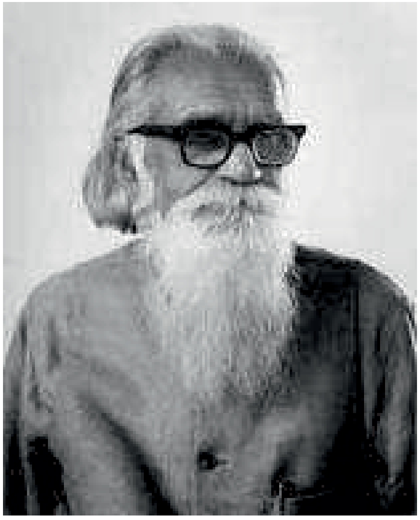

सन् 1915 में गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से सदा के लिए हिन्दुस्तान आ गये।

पांच-छह बरस के बाद यानी सन् 1920 में गांधीजी ने सारे देश के स्वराज्य-आंदोलन की बागडोर अपने हाथों में ली और एक जबरदस्त तहरीक देश में जगायी।

ठीक दस साल के बाद गांधीजी ने लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वातंत्र्य के ध्येय का स्वीकार करके आखिरी फैसला करने के लिए नमक-सत्याग्रह शुरू किया।

उसके पश्चात् ठीक बारह साल के बाद (1942 में) उन्होंने अंग्रेजी हुकूमत को भारत छोड़ जाने की नोटिस दी। और पांच साल के इस संग्राम के अंत में भारत स्वतंत्र हुआ। 'बारह वर्ष का एक तप' के हिसाब से गांधीजी की यह अद्‌भुत रोमहर्षक स्वराज्य-सेवा ठीक तीन तप तक चली। और अंत में सफल हुई।

इन तीन तपों का इतिहास गांधीजी जैसे या जवाहरलालजी जैसे राष्ट्र-पुरुषों के जीवन में, उनकी वाणी में और उनकी प्रवृत्तियों में प्रतिबिम्बित हुई ही है। लेकिन इन तीन तपों के दरमियान जिन-जिन छोटे-बड़े व्यक्तियों ने उसमें भाग लिया और उस सारी प्रवृत्ति का और उसके पीछे की प्रेरणा का निरीक्षण किया, उनका कर्तव्य है कि वे अपनी-अपनी अनुभूति और स्मृति के अनुसार अपने संस्मरण लिख दें।

और गांधीजी तो राष्ट्र-पुरुष होने के अलावा युग-प्रेरक महामानव भी थे। उनके साथ संबंध रखने वाली सभी घटनाएं असाधारण महत्त्व की हैं।

इसलिए तो स्वराज्य सरकार ने राजतंत्र व्यवस्थित होते ही तमाम गांधीजी-वाङ्मय एकत्र करके उसे प्रकाशित करने की योजना तैयार की। यह योजना बारह-पन्द्रह साल के सतत प्रयत्न के अंत में सफल होने वाली है। उसमें तो गांधीजी की वाणी और लेखनी से जो-जो निकला उस सबका संग्रह होगा।

लेकिन गांधीजी का पूरा परिचय पाने के लिए और स्वराज्य-युग के भारत का इतिहास संपूर्ण करने की दृष्टि से भी अन्य विविध साहित्य की आवश्यकता है। महादेव भाई की डायरियां और उनके लिखे हुए साप्ताहिक पत्र तो गांधीजी का संपूर्ण जीवन लिखने के लिए महत्त्व का मसाला है ही। श्री प्यारेलालजी के पास जो कीमती मसाला पड़ा है, उसका उपयोग करके वे गांधीजी का विस्तृत जीवन-चरित्र लिख ही रहे हैं। लेकिन छोटे-बड़े प्रसंगों की सारी ब्योरेवार जानकारी भी लोगों के सामने आनी चाहिए।

स्वराज्य के लिए नमक-सत्याग्रह शुरू करके गांधीजी 1930 में जेल गये। सरकार ने उन्हें यरवडा जेल में स्टेट-प्रिजनर—राजकैदी—के तौर पर रखा था। उस समय उनके साथ रखने के लिए सरकार ने मेरी पसंदगी की और मुझे साबरमती जेल से यरवडा जेल भेज दिया। गांधीजी के साथ इस प्रकार मैं पांच-सवा पांच महीने रहा हूंगा।

मेरे रिहा होने पर यरवडा जेल में ही लाकर रखे हुए प्यारेलालजी को मेरे स्थान पर गांधीजी के साथ रखा गया। लेकिन थोड़े ही दिनों में (ता. 26.1.1931) इन दोनों को और अन्य कुछ नेताओं को सरकार ने छोड़ दिया।

प्यारेलालजी ने अभी-अभी मेरे पास मांग की कि बापूजी के साथ मैं रहा, उन दिनों का वृत्तांत मैं लिख डालूं। दूसरे लोगों का भी अनुरोध था ही। इसलिए, इतने बरसों के बाद, जैसा याद आता है वैसा यथास्मृति मैं उसे लिखना चाहता हूं।

सन् तीस के उस आंदोलन में गांधीजी यरवडा जेल में साढ़े आठ महीने रहे। इस कालावधि में मुख्य राजनीतिक घटना तो यही हुई थी कि सर तेजबहादुर सप्रू और श्री जयकर उनसे अनेक बार मिलने आये और उस मध्यस्थता के फलस्वरूप सरकार ने श्री मोतीलालजी, जवाहरलालजी, सरदार वल्लभ भाई आदि कांग्रेसी नेताओं को यरवडा जेल में गांधीजी के पास इकट्ठा किया और उनके बीच और जयकर व सप्रू के बीच बातचीत होने दी।

इसके अलावा, इस कालावधि में गांधीजी ने साहित्यिक दृष्टि से तीन-चार प्रवृत्तियां शुरू कीं और उन्हें पूरा भी किया।

1. आश्रम के ग्यारह व्रत और उनके अलावा यज्ञ और नम्रता आदि सिद्धांत समझाने के लिए उन्होंने हर हफ्ते आश्रमवासियों के लिए प्रवचन लिख कर भेजें, जो पहले 'व्रत-विचार' के नाम से और बाद में 'मंगल प्रभात' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। व्रतों का यह भाष्य इतना महत्त्वपूर्ण और लोकप्रिय सिद्ध हुआ कि उसका अनुवाद हिन्दुस्तान की सब भाषाओं में और अंग्रेजी में भी हुआ है।

2. यह भाष्य पूरा होने के बाद बापूजी ने गीता के एक-एक अध्याय का सार हर हफ्ते आश्रमवासियों के लिए भेजना शुरू किया। सन् तीस की जेल में वह पूरा न हो सका। लेकिन गोलमेज परिषद् से वापस आने के बाद जब सन् 1932 में सरकार ने उन्हें फिर से यरवडा में रखा, उस समय उन्होंने उसे पूरा किया। ये अठारह प्रवचन 'गीताबोध' के नाम से प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें गीता का बोध साधारण आदमी आसानी से समझ सके ऐसी सुलभ भाषा में दिया गया है। गांधीजी कहते हैं कि 'गीता को जिस तरह मैं समझा हूं उस तरह उसे समझाने की कोशिश मैंने इसमें की है।'

3. बापूजी की ऐसी ही एक तीसरी

लेखन-प्रवृत्ति थी मीराबहन (Miss Slade) के उपयोग के लिए उनका किया हुआ पूरी 'आश्रम-भजनावली' का अंग्रेजी अनुवाद। प्रातः स्मरण के श्लोकों से लेकर अनेक भाषाओं में से पसंद किये हुए तमाम श्लोकों का और भजनों का अंग्रेजी अर्थ गांधीजी ने बड़े प्रेम से अंग्रेजी में तैयार कर दिया।

4. सरकार के साथ कुछ अनबन होने से खानगी मुलाकातें लेने से गांधीजी ने इन्कार कर दिया था। परन्तु हर हफ्ते अनेक लोगों को पत्र लिखना जारी रखा। इस प्रकार उन्होंने सैकड़ों पत्र भेजे। उनमें से कुछ तो काफी लंबे थे।

गीता के श्लोक कंठ करने की उनकी इच्छा बहुत सालों की थी। यरवडा के एकांत में उसे पूरा करने का मनसूबा उन्होंने किया था। मेरे उनके पास जाने से उस समय में कुछ कटौती जरूर हुई, लेकिन उन्होंने मेरी मदद से गीता के श्लोकों का बिल्कुल निर्दोष उच्चारण कंठगत करने का पूरा और सफल प्रयत्न किया।

भारत के हर आदमी को पड़ोस के प्रांत की भाषा सीखनी चाहिए, यह भी गांधीजी के आग्रह का एक विषय था। मैं उनकी सेवा में रहा, उस बीच उन्होंने थोड़ा-बहुत मराठी साहित्य पढ़ डाला। इस भाषा के ज्ञान का उन्हें पहला लाभ यह हुआ कि 'आश्रम-भजनावली' के मराठी अभंगों और भजनों का अंग्रेजी अनुवाद करना उनके लिए आसान हो गया। मैं तो उनकी मदद में था ही। बंगाली भजनों का अनुवाद हम साथ बैठकर कर सकते थे, लेकिन मैंने बापूजी से कहा कि 'ये भजन रविबाबू के हैं और उनका अंग्रेजी या तो कवि ने खुद किया है अथवा उनकी देख-रेख में हुआ है।' इसलिए उस हिस्से को अपने अनुवाद में से उन्होंने छोड़ दिया।

पूज्य बापूजी जैसे सत्याग्रही का जीवन तलवार की धार पर चलने जैसा था। और खास करके जेल में तो वे सरकार के मजबूरन बने हुए मेहमान थे, इसलिए हर कदम की योग्यता के बारे में वे हर क्षण जागरूकता से विचार करते ही रहते थे। यह चीज देखने का मौका मुझे मिला, यह भी एक असाधारण शिक्षा और असाधारण भाग्य की बात थी।

यरवडा-निवास के दिनों में गांधीजी का ध्यान आहार के द्वारा स्वास्थ्य संभालने और सुधारने की ओर रहता था। आहारशास्त्र और प्राकृतिक चिकित्सा का आरोग्यशास्त्र—इन दो शास्त्रों के गांधीजी असाधारण रसिया और माहिर थे। और उनके लिए ये दोनों शास्त्र केवल भौतिक शास्त्र नहीं थे; उनके पीछे उनका सर्वोदय का विशिष्ट अर्थशास्त्र और मोक्ष-परायण आध्यात्मशास्त्र भी काम करता ही था। खानगी पत्रों में अपने इन आहार, आरोग्य और उपचार के प्रयोगों के बारे में लिखते वे कभी थकते ही नहीं थे।

जीवन की हरएक प्रवृत्ति में सत्यनिष्ठा से बरतने वाले गांधीजी का वैज्ञानिक दृष्टि से काम लेना स्वाभाविक ही था। इसलिए अपना वजन, पेट की सफाई, मन की प्रसन्नता और शरीर की कार्यशक्ति इत्यादि का चौतरफा सूक्ष्म निरीक्षण करके वे समय पर अपने आहार में फेरफार करते थे और सुबह-शाम घूमने की कसरत, तकली चरखा या सिलाई का संचा चलाने की मेहनत और सीधा तनकर बैठने की साधना—सब बातों का सूक्ष्म मेल साधने की उनकी कोशिश अखंड रूप से चलती रहती थी।

ऊपर की सब बातें असाधारण महत्त्व की जरूर थीं, लेकिन गांधीजी की चित्तवृत्ति सोलहों आने लगी रहती थी उनकी कातने की प्रवृत्ति में और तकली, चरखे या धुनकी में करने जैसे सुधारों की उधेड़बुन में।

चौबीस घंटों के जीवन का निरीक्षण करके और उनके सैकड़ों पत्र पढ़कर ऐसा ही विश्वास होता था कि गोलमेज परिषद् की अपेक्षा भी गांधीजी के लिए चरखे की और कातने की सफलता अधिक महत्त्व की चीज थी। वे इच्छित अंकवाला मजबूत एक समान सूत निकालते गये और कातने की गति भी बढ़ाते गये। जब वे एकाग्रता से चरखा चलाते थे तब उस कताई की तालबद्ध आवाज कानों को ऐसी मधुर, गंभीर और भव्य लगती थी, मानो हम अनुष्टुप छंद में लिखे हुए महाभारत के श्लोक ही सुन रहे हों।

इन दिनों में जेल में बैठे-बैठे उन्होंने खपरैल के या घड़े के टुकड़ों से और बांस की सलियों से कई तकलियां स्वयं तैयार कीं। जीवन-चक्र, गांडीव, बारडोली-चक्र, किसान-चरखा आदि जो अनेक तरह के चरखे उनके पास आये थे, उन सबका हम दोनों ने काफी प्रयोग किया और गांधीजी ने हरएक चरखे की खूबी और खराबी जांच ली। आखिर में उन्होंने स्वयं एक सुंदर से सुंदर चरखा खोज निकाला, जिसे आज यरवडा-चक्र का नाम मिला है।

जेल में पहुंचते ही मीराबहन के द्वारा उन्होंने बाहर से धुनकी मंगवा ली और अपने एक कमरे की (जेल में उन्हें उपयोग के लिए तीन कमरे मिले थे) छत के साथ उसे टांगकर रुई धुनने का और पूनियां बनाने का काम वे बाकायदा करने लगे।

वह कला उन्होंने मुझे भी सिखा दी।

इस प्रकार तकली और चरखा बनाने के काम से लेकर रुई धुनना, पूनियां बनाना, सूत कातना, उसका अंक निकालना और टोपियां सीना—ऐसे विविध काम उन्होंने पूरी एकाग्रता से किये। इसलिए गांधीजी की इस समय की जेल को एक ओर मैंने 'नमक की जेल' का नाम दिया है और दूसरी ओर 'चरखे की उग्र उपासना की जेल' के रूप में भी इस जेल को पहचानने की मैं पाठकों से सिफारिश करता हूं।

यह तो उनकी अपनी प्रवृत्ति। लेकिन जेल में बैठे-बैठे हिन्दुस्तान के असंख्य लोगों की और उनके परिवारों की चिन्ता भी बापूजी करते थे। जितने लोगों के पत्र आते थे, उतने लोगों के व्यक्तिगत और कौटुम्बिक सवालों में गहरे उतरकर वे उन्हें सलाह देते थे। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक आरोग्य का एक साथ ख्याल करके जो सलाह वे देते थे, उसका मनन-चिन्तन करना भी एक असाधारण शिक्षा ही थी। इस प्रकार जो थोड़े महीने का समय मुझे सरकार की इच्छा से गांधीजी के साथ रहने को मिला, उस काल के कुछ प्रसंग इस पुस्तक में मैंने दिये हैं। राष्ट्रीय या राजनीतिक जीवन के अलावा उनके साधनामय जीवन में मेरे देखते हुए अथवा मेरे कारण जो प्रसंग बने, उन्हीं को यहां मैंने दिया है। जिस उद्देश्य से 'बापू की झांकियां' मैंने लिखी थीं उसी उद्देश्य से ये प्रसंग भी लिखे हैं। गांधीजी के बारे में कोई भी बात लोगों को रोचक लगती ही है, इसलिए मेरा विश्वास है यह संस्मरण भी उनको रोचक मालूम होगा। ❑

कश्मीर का मसला और उसका हल

❑ विनोबा

कश्मीर जाने से पहले मैंने कश्मीर के बारे में बहुत कुछ सुना था, लेकिन जो सुना था, वहाँ जाने पर उससे एकदम विपरीत देखने को मिला। झूठ और सच में कितना फासला है, ऐसा कोई पूछे तो मैं कहूँगा, जितना फासला आँख और कान में है। मैं कश्मीर-वैली में घूमकर आया और मैंने देखा कि वहाँ के हिन्दू, मुसलमान आदि सब प्यार करना जानते हैं और प्यार करना चाहते हैं। चन्द बुरे लोग दुनिया में सब जगह होते हैं और वे भी जिन्दगी का जायका बढ़ाने के लिए ही होते हैं। वैसे कश्मीर में भी हैं, लेकिन मैंने देखा कि जिस तरह कश्मीर की हवा में ठण्डक है, वैसे ही दिमाग में भी ठण्डक है। यह देखने से ही पता चला, सुनने से नहीं। (1)

जम्मू-कश्मीर राज्य में कदम रखते ही मैंने कहा था कि कश्मीर का, हिन्दुस्तान का और दुनिया का मसला रूहानियत से हल होगा, सियासत नहीं है। (2)

मैंने यह भी कहा था : ''हम तो समझते हैं कि कश्मीर में कोई मसला है ही नहीं।'' जब यह अखबारों में छपा तो कुछ लोग हैरान हो गये और कहने लगे कि यह आपने कैसे कहा? मैंने उनसे कहा : ''मृगजल वहीं होता है, जहाँ धूप की किरणें पड़ती हैं, लेकिन जहाँ रात होती है, वहाँ मृगजल नहीं होता। मृगजल का खयाल मात्र ही है।'' इसी तरह वे मसले भी खयाली हैं। अगर हम ठीक ढंग से पेश आते हैं, तो मसले काफूर हो जाते हैं। मसले हम मनुष्यों ने बनाये हैं। वे परमेश्वर के बनाये नहीं हैं। यह ठीक है कि बिहार में बाढ़ आती है, तो कुदरत एक मसला खड़ा करती है। आज भी चीन में तीन-तीन हजार मील बहने वाली नदियाँ बाढ़ के कारण अपनी जगह बदलती रहती हैं। यह एक कुदरती मसला है। इसमें विज्ञान की मदद ली जाय, तो वह कुछ हद तक हल होगा और कुछ हद तक नहीं भी होगा। लेकिन कश्मीर में मसला मनुष्यों ने पैदा किया है। हम मसले पैदा करने में बहादुर हैं। यदि हम प्रेम से रहना सीखें, तो ऐसे पैदा किये सभी मसले जरूर हल होंगे। इसलिए मैं तो कहता हूँ कि यहाँ मसला है ही नहीं। (3)

मन से ऊपर उठें : कश्मीर के लोगों ने मुझे सुनाया कि कश्मीर में एक मसला है और उसके तरह-तरह के हल जो उन्हें सूझे थे और उन्होंने सोचे थे, वे भी मेरे सामने रखे, तब मैंने उन्हें स्पष्ट दर्शन कराया कि जिस तरह आप इन्हें सुलझाना चाहते हैं, उस तरह वे सुलझते नहीं हैं। छोटा-सा मसला भी दिन-ब-दिन सीमित न रहकर अन्तर्राष्ट्रीय रूप ले लेगा और पेचीदा बनता जायेगा। इसलिए ऐसे सब मसले हल करने के लिए लोगों को मन के ऊपर उठना चाहिए। अभी हमारा मन जिस स्तर पर काम करता है, उसके ऊपर के स्तर पर सोचना होगा। अन्यथा इन मसलों को हल करने में हम नाकाम ही साबित होंगे। (4)

कश्मीर के विरोधी दल—डेमोक्रेटिक नेशनल कान्फ्रेंस—के कुछ भाई हमसे मिलने आये थे, जो बहुत अच्छे जवान थे। हमने उनकी बातें सुनीं। कुछ लोग उनकी बातों को गलत मानते हैं। मैंने कहा था कि दुनिया के मसले सियासत से नहीं, रूहानियत से ही हल होंगे। सियासत दिलों के टुकड़े करती है। जहाँ सियासत चलती है और अलग-अलग पार्टियाँ बनती हैं, वहाँ एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि हम आपस में वैर न करें। एक-दूसरे की बातें सुनते हुए दिल में जज्बा पैदा न होने दें। अगर दिल में जज्बा या खौफ पैदा हुआ, तो इस विज्ञान के जमाने में हम बिलकुल गये-बीते साबित होंगे। होना तो यह चाहिए कि दिल में आग हो और दिमाग में बर्फ। दिल में तड़पन हो, तमन्ना हो, लेकिन दिमाग ठण्डा हो। विज्ञान के इस जमाने में लड़ाइयाँ भी जज्बात से नहीं होतीं। इसलिए सिर्फ जोश से काम नहीं बनता, जोश के साथ होश भी चाहिए। (5)

डर से नहीं, प्रेम से काम लें : वहाँ सीज फायर लाइन के इस तरफ हिन्दुस्तान की हजारों की फौज खड़ी है, तो उधर पाकिस्तान की उतनी ही फौज खड़ी है। सीज फायर लाइन के मानी है 'कीप रेडी फार फायर लाइन'—जिस क्षण हुक्म होगा, उस क्षण गोली चलाने के लिए तैयार रहो। इस तरह छोटे-छोटे दिल बनाकर हम एक-दूसरे का डर खरीदते हैं।

आज दुनिया में जितना डर है, उतना पहले कभी नहीं था। बड़े मुल्क भी डरते हैं और छोटे भी। हिन्दुस्तान पाकिस्तान के डर से फौज रखता है और पाकिस्तान कहता है कि ''पता नहीं, हिन्दुस्तान की नीयत कैसी है। कहीं वह हमला कर दे, तब हम क्या करेंगे? इसलिए हमें तैयार रहना पड़ता है।''

हमें समझना चाहिए कि यह इन्सानियत नहीं है। हमारी समझ में नहीं आता कि क्या वजह है कि पाकिस्तान के लोग खुलेआम इधर नहीं आ सकते और इधर से उधर नहीं जा सकते! मैं यह नहीं कहना चाहता कि यह खयाली डर है। इसका भी एक सबब है, लेकिन उस सबब को हमें उखाड़ना होगा। आज हम करीब चार सौ करोड़ रुपया हर साल लश्कर पर खर्च करते हैं और पाकिस्तान सौ करोड़। दोनों मिलकर पाँच सौ करोड़ रुपया खर्च हो रहा है। यह जो डर-खाते खर्च हो रहा है, वही प्रेम-खाते क्यों नहीं हो सकता? (6)

विश्वास की जरूरत : एक दिन हमने अखबार में एक खुशखबरी पढ़ी थी कि श्री अयूब खाँ ने कश्मीर के मुतल्लिक कहा था

कि "हम हिन्दुस्तान पर कभी हमला करने वाले नहीं हैं। हमें अगर हमला करना होता तो पहले ही करते।" मैं जानता ही था कि वे हमला करने वाले नहीं हैं। हमला करना उनके लिए नामुमकिन है। एक खेत का किसान पड़ोसी के खेत पर कब्जा कर ले यह अलग बात है, लेकिन हिन्दुस्तान और पाकिस्तान जैसे बड़े देश एक-दूसरे पर हमला करें, यह तब बनेगा, जब अमेरिका पीछे रहेगा और कहेगा कि हमला करो। लेकिन अमेरिका इस समय यह नहीं कहने वाला है, क्योंकि इससे विश्व-युद्ध छिड़ जायेगा। इसलिए यह होने वाला नहीं है। लेकिन हमेशा हमले का डर और अंदेशा रहता है। अयूब खाँ ने लफ्जों में ऐसा ऐलान किया, इससे मुझे खुशी हुई। इसी तरह हम एक-दूसरे पर एतबार करना सीखेंगे तो नजदीक आयेंगे। (7)

मैं चाहता हूँ कि कश्मीर सारी दुनिया को जोड़ने वाली कड़ी बन जाय। आज कश्मीर स्वयं एक मसला बन बैठा है, जब कि होना यह चाहिए था कि कश्मीर का कोई अपना मसला न हो और वह दुनिया के मसले हल करे। आखिर ऐसे खूबसूरत प्रदेश में झगड़े क्यों हों? वहाँ जो सियासी झगड़े चल रहे हैं, उन्हें मिटा दें, तभी ताकत बढ़ेगी।

अन्तर्राष्ट्रीय पहलू : हमने देखा कि जम्मू और कश्मीर के मसले का जो अन्तर्राष्ट्रीय पहलू है, वह तो तब हल होगा, जब अन्तर्राष्ट्रीय हालात बदलेंगे और हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, अफगानिस्तान आदि जिन-जिनका सम्बन्ध कश्मीर से आता है, उन सबके मन में मसला हल करने की बात आयेगी। उन सबके मन में जब ऐसा ख्याल आयेगा, तब सिर्फ कश्मीर का मसला ही नहीं, दुनिया के सभी मसले हल होंगे, परन्तु जहाँ तक कश्मीर का सवाल है वह तब हल होगा, जब वहाँ के लोग अन्दरूनी ताकत महसूस करेंगे। (8)

आत्म-निर्भर हों : मैं चाहता हूँ कि वहाँ दो काम हों—पहला, सब दिल जुड़ जायँ, दिल का इत्तिफाक हो और दूसरा, वहाँ की जनता निडर बने और अन्दर शान्ति, हिम्मत और इत्मीनान महसूस करे। (9)

आखिर कश्मीर का नसीब किसके हाथ में है? सियासतदाँ कहते हैं कि आपका नसीब उनके या उनकी पार्टी के हाथ में है। कोई यह नहीं कहता कि आपका 'जन्नत' और 'जहन्नुम' आपके ही हाथ में है, किसी दूसरे के हाथ में नहीं।

जरूरत इस बात की है कि हम अपने हाथ-पाँव और दिलो-दिमाग पर भरोसा करें, नेक काम करें और एक होकर काम करें। अगर हम ऐसा करते हैं तो हमारी किस्मत एक हद तक हमारे हाथ में रहती है। उस हद के बाद यदि वह किसी और के हाथ में है तो ईश्वर के हाथ में है, और किसी के हाथ में नहीं। (10)

दुखियों की सेवा करें : हमारी यात्रा के दौरान वहाँ के कारीगर, जो बहुत अच्छी तरह से लकड़ी का काम करते हैं, हमसे मिलने आये थे। जब पाकिस्तान की तरफ से वहाँ हमला हुआ और बाद में हिन्दुस्तान की फौज गयी, तब उन्हें दोनों तरफ से तकलीफें झेलनी पड़ीं। हमलावर तो तंग करना चाहते हैं, लेकिन बचाने वाले, जो कि मदद करना चाहते हैं, वे भी तबाह ही करते हैं। हमलावर और बचाने वाले दोनों ने मिलकर कोरिया को तबाह किया; उसके दो टुकड़े हो गये। इसलिए हमारा कहना है कि तशद्दुद यानी हिंसा से मसले हल नहीं होंगे। आज हिंसा इतनी खौफनाक बनी है कि हिंसा से मसला हल करना गुनाह बेलज्जत होगा। अब कोई देश वैसे अकवामी मसले तशद्दुद से हल करने जाय, तो वह बेवकूफी होगी। आज फौज पर हिन्दुस्तान तीन सौ करोड़ और पाकिस्तान सौ करोड़ रुपया खर्च कर रहा है। दोनों भाई-भाई हैं, लेकिन एक-दूसरे के डर के कारण इतना खर्च कर रहे हैं। अगर यही खर्च अवाम की भलाई के लिए किया जाय, तो कुल गरीबों को, बेजमीनों को इमदाद मिल सकती है। मैं चाहता हूँ कि कश्मीर के कारीगरों को जमीन दी जाय, ताकि उनकी तकलीफें दूर हों। (11)

गरीबी मिटाना पहला काम : जम्मू और कश्मीर की हालत विशेष प्रकार की है। कहते हैं कि वहाँ की राजनीतिक परिस्थिति डाँवाडोल है। इसीलिए वहाँ गरीबों को कुछ मदद मिले, तो उन्हें इत्मीनान हो जाता है और राज्य को भी स्थिरता प्राप्त होती है। अगर साक्षात् गरीबों के लिए कुछ न किया जाय, ऊपर-ऊपर से ही काम करें और राज्य को गरीबी का शाप ही मिले, तो उसमें क्या सार रहेगा? (12)

वहाँ की गुरबत से हमें बड़ा सदमा पहुँचा। हमें जो-जो जगह खूबसूरत जगह के तौर पर दिखायी गयी, वहाँ हमने बहुत गुरबत देखी, इसलिए वे हमें बदसूरत मालूम हुई। यह गुरबत हिन्दुस्तान में है और एशिया के बहुत सारे हिस्सों में भी है। हमें इसका मुकाबला करना है।

मिली-जुली ताकत की जरूरत : इसके लिए सभी लोगों को मिल-जुलकर अपनी ताकत लगानी होगी, पार्टियों के खयाल छोड़ने होंगे। ऐसा करना पार्टी वालों के लिए बड़ा मुश्किल है। एक पार्टी वाला सोचता है कि सैलाब का मुकाबला करने के काम में हम दूसरी पार्टी वालों की मदद लेंगे तो उनकी इज्जत बढ़ेगी; और दूसरा भी इसी ढंग से सोचता है। इसलिए अच्छे काम भी हम अकेले-अकेले ही करते हैं। एक-दूसरे की नीयत पर हमें शक होता है, इसलिए एक साथ काम करना मुश्किल हो जाता है। जम्हूरियत में भी हम एक-दूसरे पर एतबार नहीं करते। बिना एतबार के सहयोग नहीं हो सकता। नतीजा यह होता है कि गुरबत मिटाने के काम में जितनी ताकत लगानी चाहिए, उतनी नहीं लगा सकते। (13)

खिदमत से ही हिफाजत : हमारी यात्रा में एक-एक करके सभी लोग हमसे मिलने आते थे। कभी नेशनल कान्फ्रेंस के भाई मिलते, कभी डेमोक्रेटिक नेशनल कान्फ्रेंस के; कभी प्लेबिसाइट फ्रण्ट वाले मिलते, तो कभी प्रजा-परिषद वाले। सिख, हिन्दू, शिया, सुन्नी भी मिले। कश्मीरी पण्डित भी मिले। सब अपना-अपना दुखड़ा गाते थे। उनकी कहानी सुनकर मैंने एक ही बात कही : "खिदमत करोगे तो महफूज रहोगे। देश में एक लाख पारसी हैं। उन्होंने अपने को महफूज रखा। उनमें दादाभाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता, जमशेदजी टाटा जैसे लोग निर्माण हुए। उन्होंने

सिर्फ पारसी कौम की ही नहीं, सारे देश की खिदमत की। इसलिए वह जमात हिन्दुस्तान में महफूज रही। कश्मीर वालों को भी यह अकल होनी चाहिए और यह समझना चाहिए कि खिदमत के बगैर कोई कभी महफूज नहीं हो सकता। (14)

मोहब्बत का पैगाम : आज तक मैं इतना ही कहता था कि गाँव एक बनें। लेकिन अब कहना चाहता हूँ कि गाँव वाले एक-दूसरे के लिए मर-मिटने को तैयार हों, जिससे गाँव एक मजबूत फौज बने। दुश्मन से लड़ने वाली फौज नहीं, क्योंकि उसके सामने कोई दुश्मन ही नहीं है; बल्कि प्रेम करने वाली फौज बने। जैसे फौज वाले अनुशासन और कानून में रहते हैं, वैसे ही गाँव वाले अपना एक कानून बनायें और उसके मुताबिक चलें। राज्य का कानून अलग हो और गाँव का कानून अलग। गाँव के सब लोग मिलकर सोचें कि गाँव की ताकत किस तरह बढ़ सकती है और गाँव के हर तबके के लिए क्या-क्या करना होगा। समाज में कई तबके होते हैं। हर तबके की जो सिफत होती है, वह प्रकट करने का मौका उसे मिलना चाहिए। हमारे गाँव का कोई मनुष्य दुखी है और वह अकेला ही रोता रहे, यह हम बर्दाश्त न करें। सारा गाँव उसके दुख में शामिल हो, तो उसके दुख का भार हलका होगा। इस तरह गाँव वालों को चाहिए कि सुख-दुःख दोनों बाँट लें। जाति, धर्म, पन्थ, पक्ष आदि का खयाल छोड़कर ग्राम-समाज बनायें। एक-दूसरे के लिए मर-मिटने को तैयार हों, यही कश्मीर का मसला हल करने का तरीका है। जातियाँ काम के लिए बनी थीं, उनमें ऊँच-नीच की कोई बात नहीं है। धर्मों में भी कोई फर्क नहीं है। धर्म यानी इबादत का तरीका। भगवान के गुण अनन्त, ला-तादाद हैं, इसलिए इबादत के तरीके भी कई होते हैं। जिसे जो गुण पसंद हो, उसकी वह इबादत करता है। (15)

रूहानियत का युग : कश्मीर में मैंने ज्यादातर रूहानियत की चर्चा छेड़ी और यह बात मैंने वहीं से बार-बार कहना शुरू किया कि अब मजहब के दिन लद गये हैं और इसके आगे रूहानियत ही कामयाब होने वाली है। सियासत के भी दिन लद गये हैं। साइन्स के जमाने में सियासत टिकने वाली नहीं है, छोटे-छोटे प्रान्तवाद, यहाँ तक कि राष्ट्रवाद भी टिकने वाले नहीं हैं। इसलिए जिसे कश्मीर का मसला कहते हैं, वह सियासत से हल होने वाला नहीं है। उसके हल के लिए जितने सियासी ढंग निकाले जायेंगे, वे सब नाकामयाब होंगे। यह बात मैं सिर्फ कश्मीर के लिए ही नहीं, बल्कि दुनियाभर के लिए कहता हूँ। (16)

आध्यात्मिकता का युग : शेख साहब से मेरी चर्चा हुई। मैं नित्य जो बातें कहा करता हूँ और पहले कश्मीर यात्रा में जो बातें कही थीं, आज भी उसके बारे में मेरा वही मत है। मैं कोई राजनैतिक व्यक्ति नहीं हूँ। मैं मानता हूँ कि आज के अणु-युग में राजनीति के दिन लद गये हैं। उसी तरह धर्म और पंथों के दिन भी समाप्त हो चुके हैं। अब आध्यात्मिकता के दिन आये हैं। यह मैं हर कहीं बताता घूमता हूँ। बड़े-बड़े लोगों को भी, यद्यपि वे राजनीति में भाग लेते हैं, फिर भी, मेरे विचार मान्य होते हैं। रचनात्मक राजनीति के दिन तो कब के समाप्त हो चुके हैं।

भारत-पाकिस्तान का प्रश्न हो, भारत-चीन का प्रश्न हो या कश्मीर का प्रश्न हो—राजनीतिक दृष्टिकोण से वह हल हो नहीं सकता। राजनीति ने अब तक तोड़ने का ही काम किया है। वह तोड़ना ही जानती है, जोड़ना वह जानती ही नहीं। इसीलिए हिन्दुस्तान के दो टुकड़े हुए। कोरिया, जर्मनी, वियेतनाम, बर्लिन आदि के दो-दो टुकड़े इसी राजनीति ने किये। राजनीति जोड़ नहीं सकती, वह तोड़ने का ही काम करती है—इस पर राजनीतिज्ञों को ध्यान देना चाहिए। (17)

(विभिन्न स्थानों में दिये गये प्रवचनों से संकलित) ❑

संविधान का अपमान भारत का अपमान

भारत छोड़ो आंदोलन के वर्षगांठ पर 9 अगस्त 2018 को कुछ अराजक तत्त्वों ने दिल्ली स्थित जंतर-मंतर पर भारत के संविधान की प्रतियां जलायी। इतना ही नहीं उन्होंने इसे सोशल मीडिया में डालकर वायरल भी किया है। उनका यह कदम दर्शाता है कि वे बेखौफ और बेफिक्र हैं। उनको यह लगता है कि सरकार उनके साथ है अतः कोई उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। 9 अगस्त एक पवित्र दिन है इसी दिन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' का आह्वान किया था। ऐसे पवित्र और ऐतिहासिक दिन पर इस तरह का कृत्य करना, दर्शाता है कि उनका भारत की आज़ादी एवं सम्प्रभुता में विश्वास नहीं है।

भारत के राष्ट्रपति को लिखे एक पत्र में सर्व सेवा संघ (अ.भा.सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष **श्री महादेव विद्रोही** ने अनुरोध किया है कि जिन लोगों ने संविधान की प्रतियां जलायी हैं, उनकी नागरिकता समाप्त की जाय तथा उनपर देशद्रोह एवं राष्ट्र के अपमान का मुकदमा चलाया जाय। संविधान जलाने वालों का यूथ फॉर इक्वीटी एवं आरक्षण विरोधी पार्टी के साथ संबंध है, इन संगठनों को तत्काल प्रतिबंधित किया जाय।

हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि केन्द्र सरकार इस मुद्दे पर अब तक मौन है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान जलाने वालों के प्रति सरकार की सहानुभूति है।

भारत का संविधान देश का सर्वोच्च ग्रंथ है। इसके साथ किसी प्रकार का खिलवाड़ बर्दाश्त नहीं किया जा सकता।

कुछ महीने पहले राजस्थान के राजसमंद के एक न्यायालय से राष्ट्रीय झंडे को हटाकर वहां भगवा झंडा लगा दिया गया। आज तक उस व्यक्ति पर सरकार कोई कार्रवाई नहीं कर सकी। सरकार मौन रही।

सर्व सेवा संघ देश के सभी प्रबुद्ध नागरिकों से भी अपील करता है कि इन देशद्रोही तत्त्वों के खिलाफ समाज में वातावरण का निर्माण करें ताकि वे पुनः इस तरह की हरकत करने की हिम्मत नहीं कर सकें।

–मारोती गावंडे
कार्यालय मंत्री, ससेसं

कश्मीर : पुनर्चिन्तन की आवश्यकता

❑ जयप्रकाश नारायण

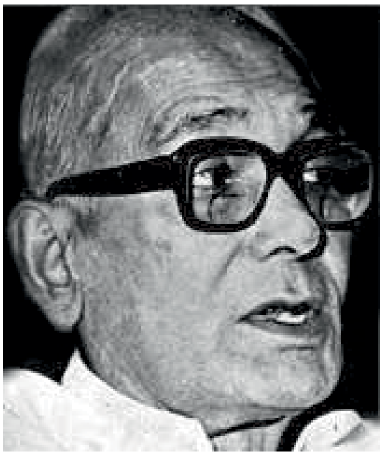

कश्मीर पर मेरे हाल के लेख ने तीव्र वाद-विवाद छेड़ दिया है। यह एक तरह से अच्छा ही है, क्योंकि भावनाओं के उभार के बाद मिजाज ठण्डा हो जाना चाहिए, ताकि जिस समस्या ने इस उप-महाद्वीप को रोगग्रस्त कर रखा है, उसके प्रति हमारा रुख अधिक समझदारी का हो। इस समस्या पर शीघ्र पुनर्चिन्तन की आवश्यकता है, और मैंने अपने पहले वाले लेख में इसी बात का अनुरोध किया था। अतः इस बात का मुझे अफसोस जरूर है कि जिन लोगों ने देश-प्रेम पर मुझे रोष-भरे उपदेश दिये, उन्होंने उन तथ्यों का, जिनकी ओर मैंने ध्यान आकृष्ट किया था, ठीक ढंग से सामना करने की जरूरत नहीं समझी।

तो भी इस वाद-विवाद को मैं बढ़ाना नहीं चाहता, क्योंकि मेरा मानना है कि इस वक्त हर सम्बद्ध व्यक्ति का कम-से-कम कुछ समय के लिए चुप रहना ही इष्ट है। परन्तु इन दिनों इस सम्बन्ध में कुछ विचित्र वक्तव्य निकले हैं और एक खतरनाक मनोवृत्ति की झलक मिली है, अतः इनमें से कुछ विचारणीय मुद्दों पर संक्षेप में कह देना और शक्य हो, तो कोई विधायक मार्ग बता देना आवश्यक मालूम होता है।

योजनाबद्ध उन्माद

जब मैंने अपने पिछले लेख में 'होहल्ले' का जिक्र किया था, तो मुझे यह कल्पना नहीं थी कि ऐसा मानस तैयार करने के लिए व्यवस्थित प्रयास किया गया होगा, जो उन्माद से भरा हो और जिसने बुद्धि को ताक पर रख दिया हो, तथा जिसमें किसी प्रकार मतभेद को सहन करने की तनिक भी सहिष्णुता न हो। श्री शेख अब्दुल्ला के दिल्ली आगमन के समय जनता में जो उत्तेजना थी, वह उन दिनों की याद दिलाती थी, जब ऐसे ही उन्माद की वेदी पर राष्ट्रपिता की बलि चढ़ी थी। अफसोस तो यह है कि इस प्रकार की चरम असहिष्णुता की भावना उत्पन्न करने में स्वयं संसद ने सहयोग दिया। मि. फ्रेंक एन्थोनी को चिल्लाकर बैठा देना यह तो उसका केवल एक उदाहरण है।

संसद के कुछ सदस्यों की मनोदशा का दुःखद नमूना तो श्री ए. पी. जैन का है, जो उत्तर प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष हैं और जो एक समय केन्द्रीय मंत्री थे। उन्होंने दिल्ली में यह बतलाया कि ऐसे भी व्यक्ति हैं, जिनकी कश्मीर-समस्या पर मुझसे (जयप्रकाश से) भिन्न राय है और वे स्वेच्छया अपने ऊपर बहुत नियंत्रण रखे हुए हैं, लेकिन अगर "श्री जयप्रकाश नारायण जिस ढंग से उभाड़ रहे हैं, उसी तरह उभाड़ते रहे, तो शायद वे अपना धैर्य खो दें।"

मुझे इस बात की कल्पना नहीं कि इस धमकी द्वारा श्री जैन क्या कहना चाहते हैं। शायद वे और उनके मित्र मुझे जेल में धरवा देना चाहते हों। व्यक्तिशः मैं इस अवसर का स्वागत करूंगा, ताकि मुझे कुछ विश्राम मिल सके और मैं कुछ पढ़ सकूँ। लेकिन सोचने-विचारने के लिए मुद्दे की बात तो यह है कि अगर श्री जैन के स्तर पर व्यक्ति इस ढंग से धमकियाँ दे, तो इसमें क्या आश्चर्य है कि नासमझ युवक मेरी हत्या करने की बात कहते फिरें।

दुःख तो इस बात का है कि जब मैंने नयी दिल्ली की एक आमसभा में इस सामूहिक उन्माद का जिक्र किया, तो राज्य सभा के कुछ मित्रों ने इस बात को मेरी व्यक्तिगत सुरक्षा का प्रश्न बना लिया (मुझे संरक्षण की आवश्यकता नहीं है) और उत्पन्न स्थिति की गंभीरता पर समुचित लक्ष्य नहीं दिया। मुझे विनयपूर्वक यह कहना है कि स्थिति को ठीक बनाये रखने के लिए संसद के सदस्यों के लिए यह अच्छा होगा कि वे स्वयं कुछ अधिक धैर्य और सहिष्णुता का आचरण करना शुरू करें।

27 संसद सदस्य

इस विवाद में जितने वक्तव्य निकले, उनमें सबसे 'बढ़कर' और आश्चर्यजनक तो वह है, जो संसद के 27 सदस्यों ने (जिनमें कांग्रेस-दल के मंत्री और अन्य महत्त्व के सदस्य हैं) दिया है। पहली बात तो यह है कि उसमें नैतिक और मानवीय मूल्यों से अधिक कानून को प्रधानता देने की बात का चौंकाने वाला प्रतिपादन किया गया है। विधायक के नाते संसद सदस्यों को कानून के स्वरूप और उसकी मर्यादाओं की जानकारी होनी चाहिए, क्योंकि वे आये दिन कानून बनाते और रद्द करते हैं; इतना ही नहीं, विधान में भी संशोधन करते रहते हैं। मानव जीवन में कानून निःसन्देह एक महत्त्वपूर्ण भाग अदा करता है, लेकिन उसकी अपनी सीमा है। नैतिक और मानवीय मूल्य कानून की सीमाओं को लाँघ जाते हैं और उनका स्थान ऊँचा है।

न यह किसी के नीति-विषयक व्यक्तिगत विचारों का सवाल है। यह समझ लेना जरा भी कठिन नहीं है कि इस जमाने की सभ्यता किस चीज को नैतिक और मानवीय मानती है। महात्मा गांधी ने राजनीति का अध्यात्मीकरण करने में अपना सारा जीवन लगा दिया। यह देखकर ग्लानि होती है कि पन्द्रह वर्षों में ही उसी संगठन के नेता, जिस संगठन को महात्मा जी ने बनाया था, नीति और मानवता का खुल्लमखुल्ला मजाक उड़ाते हैं।

कश्मीर के विषय में उन्होंने अपने

वक्तव्य में अधिकारपूर्ण इस प्रकार कहा है—''आप जिस तरह बम्बई या बिहार के आत्म-निर्णय की बात नहीं कर सकते, उसी प्रकार कश्मीर के विषय में भी नहीं कर सकते।'' आगे चलकर वे कहते हैं : ''अमेरिका के स्वतंत्र होने के पश्चात् क्या वहाँ के किसी राज्य को आत्म-निर्णय का तथाकथित अधिकार दिया गया था?'' अवश्य ही कांग्रेसी संसद सदस्य इससे ज्यादा जानते होंगे, फिर जान-बूझकर इस तरह का घपला क्यों? कारण समझ लेना मुश्किल नहीं है।

मूलभूत तथ्य

कहावत है कि जन-साधारण की स्मरण-शक्ति बहुत लम्बी नहीं होती। कहीं वे यह मान बैठें कि कश्मीर के लिए आत्म-निर्णय का विचार जयप्रकाश या उसके जैसे लोगों के दिमाग की उपज है, अतः मैं इस विषय का इतिहास जरा स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। जब देश के विभाजन का सिद्धान्त स्वीकृत किया गया, तो यह तय हुआ था कि हिन्दुस्तान का जो भाग 'ब्रिटिश हिन्दुस्तान' था, उसका बँटवारा हिन्दू तथा मुस्लिम बहुमत वाले क्षेत्रों के आधार पर कर दिया जाय। (बिना किसी लोकमत के) और जो 'देशी राज्य' थे, उनके राजाओं को भारत या पाकिस्तान से मिलने की स्वतंत्रता हो। इस प्रकार, बिहार या बम्बई में लोकमत लेने का प्रश्न ही नहीं था।

देशी राज्यों के विषय में स्थिति यह थी कि इधर या उधर रहने के लिए राजा की स्वीकृति ही पर्याप्त थी। अतः जब कश्मीर के महाराजा हरीसिंह ने भारत के साथ विलयन स्वीकार किया, तब सदा के लिए और आखिरी तौर पर यह मामला तय माना जाना चाहिए था (और कानूनी दृष्टि से बात वैसी ही थी)। लेकिन वैसा नहीं हुआ, इसमें कुछ रुकावट आयी। यह कहा गया कि विलयन की बात जनता के नेताओं द्वारा भी मान्य होनी चाहिए। और उसी क्षण कश्मीर के सम्बन्ध में आत्म-निर्णय या जनमत का विचार घटना-चक्र में प्रविष्ट हुआ। ता. 27 अक्टूबर 1947 को विलयन-पत्र को स्वीकार करते हुए (तत्कालीन गवर्नर जनरल) लार्ड माउण्टबैटन ने उसी रोज एक अलग पत्र में महाराजा को इस प्रकार लिखा : ''आपने जिन विशेष परिस्थितियों का जिक्र किया है, उन्हें देखते हुए मेरी सरकार ने भारत में कश्मीर का विलयन स्वीकार करना तय किया है। उनकी इस नीति के अनुसार कि जिस राज्य के विलयन का प्रश्न झगड़े का विषय बना हो, उस राज्य का विलयन वहाँ की जनता की इच्छाओं के अनुसार तय होगा, मेरी सरकार यह चाहती है कि ज्यों ही कश्मीर में शान्ति स्थापित हो जायेगी और वह प्रदेश हमलावरों से मुक्त हो जायेगा, राज्य के विलयन का प्रश्न जनमत से निश्चित किया जाय।''

आश्वासन का समर्थन

कुछ दिन बाद (2 नवम्बर 1947) श्री नेहरू ने आकाशवाणी पर दिये गये एक वक्तव्य में गवर्नर जनरल द्वारा किये गये आश्वासन का इस प्रकार स्पष्ट शब्दों में पुनरावर्तन किया था : ''हमने इस विलयन को स्वीकृत करने और हवाई जहाज द्वारा सेना भेजने का तय किया, लेकिन हमने यह शर्त रखी कि जब शान्ति स्थापित हो जायेगी, तब इस विलयन पर कश्मीर की जनता विचार करेगी। संकट के क्षण में और जनता को राय देने का पूरा मौका दिये बिना हम अंतिम तौर पर कुछ भी तय करने के लिए आतुर नहीं हैं। अन्ततोगत्वा यह बात उन्हें तय करनी है। और मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि बराबर हमारी यह नीति रही है कि जिस राज्य के विषय में विलयन के प्रश्न पर विवाद हो, तो उसका निर्णय उस राज्य की जनता करेगी। इसी नीति के अनुसार हमने विलयन-पत्र में यह शर्त रखी थी।''

बाद में उसी वक्तव्य में प्रधानमंत्री ने सारी दुनिया को संबोधित करके कहा : ''हमने यह घोषणा की है कि कश्मीर का भाग्य अन्त में वहाँ की जनता को ही तय करना है। हमने यह वचन केवल कश्मीर की जनता को ही नहीं, सारे विश्व को दिया है और महाराजा ने इसका अनुमोदन किया है। हम इससे पीछे न हट सकते हैं, न हटेंगे। जब शान्ति स्थापित हो जायेगी, तब संयुक्त राष्ट्रसंघ जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की देखरेख में जनमत लिया जायेगा। हम इसे न्यायोचित मानते हैं। और उनके फैसले को स्वीकार करेंगे। मैं इससे अधिक और किसी न्यायसंगत प्रस्ताव की कल्पना नहीं कर सकता।''

ऐसी स्पष्ट स्थिति होने पर भी मुझे आश्चर्य है कि प्रश्न को उलझाने और अस्पष्ट बनाने के लिए ऐसे जी-तोड़ प्रयत्न किये जा रहे हैं।

मामले को स्पष्ट करने के लिए यहाँ एक दूसरी दलील पर भी विचार करना सहायक सिद्ध होगा। (यह दलील 27 संसद सदस्यों की अपील में नहीं थी।) थोड़े में वह इस प्रकार है : ठीक है कि विलयन-पत्र में अब कुछ करना शेष नहीं रहता। यह कहा जाता है कि शर्त की पूर्ति तभी हो गयी, जब कश्मीर की कान्स्टीट्यूएण्ट एसेम्बली ने 1956 में विधान स्वीकार किया, जिसमें यह घोषित किया गया था कि ''जम्मू और कश्मीर का राज्य भारत का एक अविभाज्य अंग है और रहेगा।'' यह भी शेख अब्दुल्ला को कैद करने के तीन साल बाद की बात थी, पर इस बात को भले ही महत्त्व न दिया। सचमुच महत्त्व की बात तो यह है कि कान्स्टीट्यूएण्ट एसेम्बली का फैसला और वह जनमत एक ही बात नहीं है, जिस जनमत का प्रधानमंत्री ने वचन दिया था।

श्री शेख अब्दुल्ला के वक्तव्यों को सामने रखकर कहा जाता है कि उन्होंने खुद विलयन को स्वीकार कर लिया था। लेकिन इस बात की किसी को कोई शंका नहीं है। महाराजा द्वारा कानूनन विलयन करने के पश्चात् शेख साहब और नेशनल कान्फ्रेंस ने उसका अनुमोदन किया, उसे स्पष्टतया स्वीकार किया और तत्पश्चात् अनेक अवसरों पर उन्होंने अपनी स्वीकृति को दोहराया। इस सबके विषय में कोई झगड़ा नहीं है। तो भी उस (जनमत की) शर्त को पूरी करना बाकी ही रहा। न तो शेख अब्दुल्ला और न नेशनल

कान्फ्रेंस ही कश्मीर की उस जनता का स्थान ले सकते हैं, जिसका मत लेना लाजिमी था, न कि शेख अब्दुल्ला का या नेशनल कान्फ्रेंस का।

एक और दलील दी जाती है कि चूँकि पाकिस्तान 'सीटो' और 'सेंटो' में शामिल हो गया और अमेरिका ने उसे हथियार दिये और दूसरी भी घटनाएँ घटीं, जिनको लेकर परिस्थिति इतनी बदल गयी कि जनमत की बात अब रह ही नहीं जाती। लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि वचन पाकिस्तान को नहीं दिया गया था, बल्कि कश्मीर की जनता को दिया गया था। पाकिस्तान के कृत्यों के कारण कश्मीर की जनता को सजा नहीं दी जा सकती।

नया मार्ग

इस सबको देखते हुए मुझे लगता है कि सही और विधायक तरीका यह होगा कि न तो हम कश्मीर के आत्म-निर्णय के अधिकार का प्रतिवाद करें, न यह दावा करें कि उस अधिकार का उपयोग हो चुका है। परन्तु दलील से यह समझायें कि उस अधिकार का उपयोग इस समय करना अव्यवहार्य और अबुद्धिमत्तापूर्ण होगा।

इस सिलसिले में नीचे लिखी बातें विचारार्थ कही जा सकती हैं :

पहली, पाकिस्तान का आक्रमण एक तथ्य है और आक्रान्त भाग को छोड़ने का उसका कोई इरादा नहीं दीखता।

दूसरी, जनमत के कारण भारत व पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों के लिए भयंकर परिणाम हो सकते हैं।

तीसरी, जनमत से जम्मू और कश्मीर राज्य के और टुकड़े हो सकते हैं।

चौथी, इन सब बातों का भारत के संरक्षण पर गंभीर परिणाम हो सकता है।

अन्य मुद्दे भी हो सकते हैं, लेकिन ये चार मुद्दे मजबूत और तर्कसंगत हैं, जिनको न तो शेख अब्दुल्ला और न कश्मीर का कोई अन्य नेता उड़ा सकता है, क्योंकि वे भारत की भलाई के लिए उतने ही चिन्तित हैं, जितने कश्मीर की भलाई के लिए।

अतः मेरा नम्र निवेदन है कि हम इस बहस को छोड़ दें कि विलयन अन्तिम तौर से हो चुका है और वह अपरिवर्तनीय है। इसके बदले हम शेख साहब के साथ बैठकर समझौते के व्यावहारिक तरीकों पर चर्चा करें। अगर हम यह मानकर चलें कि शेख अब्दुल्ला विलयन को अन्तिम और अपरिवर्तनीय स्वीकार कर लें यही एक तरीका है, तो बेहतर है कि हम उन्हें फिर जेल में डाल दें, क्योंकि उनको यह बात कभी मान्य नहीं होगी। लेकिन जो दोनों को स्वीकार्य हो, ऐसा हल ढूँढ़ने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि कोई भी पक्ष अपनी बात छोड़ दे। महत्त्व का प्रश्न यह है कि हर पक्ष को यह समझना चाहिए कि अपने ही पक्ष का समर्थन करते रहने और उसी से चिपके रहने से समस्या का हल नहीं हो जाता। भले हम कितने ही बलपूर्वक यह कहते रहें कि कश्मीर का विलयन अंतिम और अमिट है, पर संसार तो इसे स्वीकार नहीं करेगा। 'आजाद कश्मीर' का हिस्सा पाकिस्तान के अधीन बना रहेगा, 'सीज फायर रेखा' ज्यों की त्यों रहेगी, दो सेनाएँ भी आमने-सामने खड़ी ही रहेंगी, भारत-पाकिस्तान के अल्पसंख्यक भय से जीवन वसर करते रहेंगे और कश्मीर में असन्तोष धीरे-धीरे उबलता रहेगा, जिसे बल प्रयोग द्वारा ही दबाया जा सकेगा, तो फिर हमारा एकतरफा अलाप सतत जारी रखने से हमें क्या हासिल होता है या भविष्य में क्या लाभ मिलने की आशा है? इसी प्रकार अगर शेख अब्दुल्ला आत्म-निर्णय के अधिकार की बात पर जोर देते रहें और परिस्थितियाँ वैसा न होने देने के लिए मजबूर करती हों, तो उससे उनको या और किसी को क्या लाभ होने वाला है? अतः यह आवश्यक है कि अपनी बात को भले ही कोई पक्ष न छोड़े, लेकिन उसे अलग रखकर व्यवहार्य हल ढूँढ़ निकालने में जुट जाय। स्मरण रहे कि अलसेस लॉरेन में तीन-तीन बार जनमत-गणना हुई, लेकिन अब किसी को भी इसमें दिलचस्पी नहीं है कि वह किस देश का भाग है।

हल

मेरा ख्याल है कि हल क्या हो, यह आज कोई नहीं जानता। फिर भी कुछ सुनिश्चित बातें कही जा सकती हैं—एक तो यह कि समस्या के समाधान के लिए सभी पक्षों में सचमुच इच्छा होनी चाहिए। दूसरे, एक अंग्रेज राजनीतिज्ञ की यह बात याद रखनी चाहिए कि जब तक कोई बात सही तरह से तय नहीं हो जाती, तब तक उसे तय हुआ मानना ही नहीं चाहिए। बेशक, यह जानना आसान नहीं है कि एक उलझी हुई परिस्थिति में सही चीज क्या है? इसकी एक कसौटी यह हो सकती है कि उससे सभी सम्बद्ध लोगों को सन्तोष हो। अतः समस्या के हल के सम्बन्ध में तीसरी बात यह होगी कि वह ऐसा हो, जो भारत और पाकिस्तान को तथा कश्मीर की जनता को सन्तोषप्रद लगे।

शेख अब्दुल्ला के बार-बार इस बात पर जोर देने से कि कश्मीर-प्रश्न के हल में भारत-पाक सम्बन्ध सुधरें यह बात मुख्य है, भारत के जनमत को झुँझलाहट हुई है और कई लोगों को इसमें उनके (शेख साहब के) पाकिस्तान के प्रति पक्षपात का दर्शन होता है, पर यह सर्वथा गलत धारणा है। शेख अब्दुल्ला को लगता है, जैसा हरएक को लगना चाहिए कि पाकिस्तान को साथ में लिये बिना कोई फैसला नहीं हो सकता। कश्मीर का प्रश्न ही पाकिस्तान को लेकर पैदा हुआ और भारत ने ही संयुक्त राष्ट्रसंघ में इस विवाद को ले जाकर पाकिस्तान को एक पक्ष बनाया है। कश्मीर के प्रश्न को अलग रखें, तो भी शेख अब्दुल्ला को लगता है कि भारत व पाकिस्तान का भविष्य इस बात पर निर्भर है कि उनमें दोस्ती रहती है या दुश्मनी।

इस मन्तव्य का इस देश में कोई गंभीरता से अस्वीकार नहीं करेगा और इसको प्रधानमंत्री जैसे व्यक्ति का समर्थन प्राप्त है। संसद में विदेशी मामलों पर हुई बहस के उत्तर में श्री नेहरू ने जो साहसपूर्ण और कुशलताभरा भाषण दिया, उसमें उन्होंने यह कहा, बताते हैं कि "उनकी तो यह आशा है कि भारत व पाकिस्तान वैधानिक तौर से भी अधिक समीप आयें, लेकिन ऐसे सुझाव से पाकिस्तान के अधिकारियों को बुरा लगे, ऐसा

अन्देशा है।'' अतः यह घोषणा करके ही सन्तोष मान लेंगे कि ''हम दोनों के लिए शान्ति से रहने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है।'' जब हम यह याद करते हैं कि यह भाषण एक ऐसे समय में दिया गया था, जब साम्प्रदायिक भावनाएँ तीव्र थीं, तो उसमें प्रदर्शित साहस और बुद्धिमत्ता हमें और भी प्रभावित करते हैं।

वास्तव में दोनों देशों के बीच किसी प्रकार की वैधानिक कड़ी का (स्व.) प्रधानमंत्री ने जो उल्लेख किया, यह आज के सन्दर्भ में विशेषतः दिलचस्प है। और यह मान लेने की कोई आवश्यकता नहीं कि पाकिस्तान सदा के लिए इस विचार का विरोध करेगा। अन्ततोगत्वा हर देश अपनी सुरक्षितता और आर्थिक प्रगति को सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण मानता है। क्या इसमें कोई सन्देह है कि भारत और पाकिस्तान की वैधानिक कड़ी जुड़ जाने पर दोनों की सुरक्षितता तथा आर्थिक प्रगति बहुत हद तक निश्चित हो जायेगी? इसके अतिरिक्त शेख अब्दुल्ला का चिन्तन भी इसी दिशा में चल रहा है—इस बात से कश्मीर के प्रश्न में आशा के एक नये तत्त्व का प्रवेश होता है। अतः अगर अपने-अपने पक्ष पर अड़े रहना छोड़ दिया जाय, तो पूर्ण आशा है कि ऐसा रास्ता निकल जाय, जो भारत, कश्मीर, पाकिस्तान—सभी को स्वीकार्य हो। यह ऊँचे दर्जे की राजनीति के लिए एक चुनौती है।

समाप्त करने से पहले कश्मीर के सन्दर्भ में हमारी धर्म-निरपेक्षता की नीति पर भी जरा नजर डालें। अन्य पहलुओं के सिवा, कश्मीर हमारे लिए इसलिए भी मूल्यवान माना जाता है कि हम इसे अपनी धर्म-निरपेक्षता के उदाहरण के तौर पर सामने रखना चाहते हैं। मुझे पता नहीं कि धर्म-निरपेक्षता की दुहाई देने वाले वर्तमान परिस्थिति में निहित विसंगति से अवगत हैं या नहीं। जिस कश्मीर को हमारी धर्म-निरपेक्षता का प्रतीक समझा जाता है, उसी को लेकर हिन्दू सम्प्रदायवाद को एकाएक सिर उठाने का मौका मिला है। इस प्रक्रिया को देख पाना आसान नहीं है, क्योंकि इस वक्त यह राष्ट्रीयता का जामा पहने हुए हैं। भारत में हिन्दू बहुमत होने से हिन्दू सम्प्रदायवाद का राष्ट्रीयता का जामा पहनकर सामने आना कठिन नहीं है। अतः यह और भी जरूरी है कि जो सचमुच धर्म-निरपेक्ष व समवायी राष्ट्रीयता में मानते हों, वे सचेत रहें।

कश्मीर भारत की धर्म-निरपेक्ष नीति का एक उदाहरण है, इसका अर्थ क्या है? मेरे विचार में उसका अर्थ यह है कि भारत के लोगों ने अपनी असाम्प्रदायिकता का ऐसा सबूत दिया है कि कश्मीर में मुसलमान बहुमत में होने पर भी उन्होंने उस भारत के साथ, रहने का स्वेच्छा से तय किया है, जिसमें हिन्दू बहुमत है; न कि उस पाकिस्तान के साथ जिसमें मुस्लिम बहुमत है और इस्लामी राज्य है। लेकिन मानो कश्मीर के मुसलमानों को हमें जबरदस्ती से भारत में रखना पड़े, तो क्या यह हमारी धर्म-निरपेक्षता का उदाहरण होगा? यह प्रश्न ही इस दलील को वाहियात ठहरा देता है। लेकिन फिर भी यह मनोवृत्ति कितनी फैली हुई है कि हमारे राष्ट्र की धर्म-निरपेक्षता की बुनियाद की रक्षा के लिए हमें आवश्यकता पड़े तो जबरदस्ती भी कश्मीर को भारत का अंग बनाये रखना चाहिए।

अतः मैं बहुत गंभीरतापूर्वक प्रधानमंत्री, कांग्रेस प्रेसिडेण्ट और अन्य कांग्रेसी नेताओं से अनुरोध करूँगा कि वे कांग्रेस पार्टी में जो सड़न घुस गयी है, उस तरफ अपना ध्यान दें। जिस तरह से घटनाएँ घट रही हैं, उनको देखते हुए शीघ्र ही, कम-से-कम इस मामले में, जनसंघ और कांग्रेस में बहुत कम फर्क रह जायेगा। डरपोक और छिछले कांग्रेसियों को यह लग रहा है कि जनसंघ बाजी ले जा रहा है। लेकिन कुल मिलाकर देखें तो लोगों का मन स्वस्थ है और वे इस मामले में भी सही नीति का साथ देंगे। बशर्ते कि उनका स्पष्ट और साहसपूर्ण मार्गदर्शन किया जाय। ❑

(मूल अंग्रेजी से अनूदित) 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 15-5-1964 से

गांधी-150 अभियान का गठन

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) की पहल से 12 अगस्त, 2018 को झारखंड में 'गांधी-150 अभियान' का गठन किया गया। श्री मधुकर अभियान के संयोजक चुने गये तथा डॉ. विश्वनाथ आजाद तथा सुनीता जी सहसंयोजक। 30 जनवरी 2019 को झारखंड के सभी जिला मुख्यालय पर सामूहिक उपवास करने का निर्णय लिया गया। इस दौरान सर्व सेवा संघ के मंत्री चंदन पाल एवं रमेश पंकज उपस्थित थे।

इस अवसर पर सर्व सेवा संघ ने झारखंड के 20 लोगों पर देशद्रोह का मुकदमा करने की खूंटी पुलिस की कार्रवाई को अलोकतांत्रिक, असंवैधानिक और अवैधानिक मानता है। खूंटी पुलिस को शायद यह नहीं मालूम कि देशद्रोह कानून का इस्तेमाल करने का प्रावधान क्या है? हद तो यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने आइटी की जिस धारा को अवैध ठहरा दिया है, खूंटी पुलिस ने उस धारा को भी इन 20 झारखंडियों पर चस्पा कर दिया है। यह न केवल अभिव्यक्ति की संवैधानिक व्यवस्था पर कुठाराघात है बल्कि शासन की ताकत का गलत इस्तेमाल भी है। जो तथ्य सामने आये हैं उससे यह कहीं भी प्रकट नहीं होता कि ये 20 लोग सरकार या देश के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करने या कराने में शामिल हैं, न ही इसमें से किन्हीं का भी पिछला रिकार्ड इस तरह का है। केवल सोशल मीडिया पर प्रतिक्रिया को देशद्रोह करार दे दिया गया है। सर्व सेवा संघ झारखंड सरकार से आग्रह करता है कि इस मामले को गंभीरता से ले और देशद्रोह के मुकदमे को तत्काल वापस ले। 1974 आंदोलन के कार्यकर्ता रहे रघुवर दास आज मुख्यमंत्री हैं, अतः उनको और अधिक संवेदना से इस मामले को लेना चाहिए ऐसा हमारा आग्रह है।

विनोद कुमार जो जयप्रकाश आंदोलन के कार्यकर्ता रहे हैं, पत्रकार और लेखक हैं। गांधी, लोहिया, जयप्रकाश के विचारों से, बिरसा मुंडा, सिधो-कानू, निलांबर-पीताम्बर, तिलकामांझी के विचारों को अपनी लेखनी से आगे बढ़ा रहे हैं। उन्हें भी खूंटी पुलिस ने देशद्रोही की सूची में डाल दिया है।

–रमेश पंकज, मंत्री, सर्व सेवा सेवा

कश्मीर का समाधान : कश्मीरियत, इंसानियत और जम्हूरियत

❑ कमल मोरारका

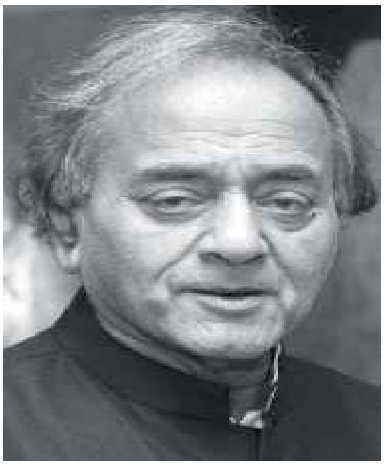

मई में मैं नौ दिनों तक सैलानी के रूप में कश्मीर में रहा। इस दौरान मैं मुख्य रूप से तीन जगहों पर गया। चूंकि मैं भी राजनीति से जुड़ा हूं, जो देखा वो आपसे साझा करना चाहता हूं। नौकरीपेशा आम आदमी, वो चाहे टैक्सी ड्राइवर हो, होटल का मुलाजिम हो, या शिकारा वाला हो, उन्हें हिन्दुस्तान-पाकिस्तान से कोई मतलब नहीं है। वे अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी जी रहे हैं। जिसे हमलोग अतिथि देवो भवः कहते हैं, वो कश्मीर में असल में है। कश्मीर की जो सूफियाना विरासत है, उसमें यह हमेशा से रहा है कि अतिथि का अच्छे से सत्कार करो। कश्मीर बहुत अच्छा प्रदेश है और यहां बहुत अच्छे लोग हैं। ज्यादा से ज्यादा लोगों को कश्मीर की वादियों को देखने जाना चाहिए। वादी में घूमने के बाद आपको एक अच्छा एहसास मिलेगा।

डेढ़ साल पहले में राजनीतिक लोगों से मिलने कश्मीर गया था। उन्हें पता है कि हम हिन्दुस्तान की तरफ हैं, फिर भी हर आदमी ने गर्मजोशी से हमारा इस्तकबाल किया। कश्मीर का माहौल बाकी हिन्दुस्तान से बिल्कुल अलग है। लेकिन आज मीडिया जिस तरह से कश्मीर के बारे में रिपोर्टिंग कर रहा है, उससे लोग डर गये हैं और वे कश्मीर नहीं जाना चाहते। लेकिन मैं गया। श्रीनगर हवाई अड्डे पर लोगों का मेला लगा हुआ है। एकदम मुम्बई और दिल्ली की तरह। हालांकि थोड़ी पुलिस है, सुरक्षा व्यवस्था है। लेकिन वहां पर वैसा कोई आतंकवाद नहीं है। ऐसा माहौल है, पत्थर फेंकने वाले छात्रों, मिलिटेंटों और सैन्य बलों के बीच। आम जनता एकदम सुकून से है। वे बेचारे गरीब हैं। ऐसे होटल वाले, शिकारे वाले चाहते हैं कि लोग वहां जाएं। मैं श्रीनगर, पहलगाम और गुलमर्ग भी गया। सब जगह लोगों ने बहुत खुले दिल से स्वागत किया। लोग चाहते हैं कि ज्यादा से ज्यादा सैलानी कश्मीर आयें। लोग पुराने कश्मीर, फिल्म शूटिंग आदि के बारे में याद करते हैं। वहां लोग बताते रहते हैं कि यहां इस फिल्म की शूटिंग हुई थी। लोग हिन्दी समझें या नहीं, लेकिन शम्मी कपूर, देवानंद को सब जानते हैं। उन होटलों की भी अलग पहचान है, जहां राजेश खन्ना कभी ठहरे थे। कश्मीर में एक अलग ही वातावरण है और हमें इसे बचाना चाहिए। सीजफायर तो होगा नहीं, आपस से झगड़ा खत्म होगा नहीं, पाकिस्तान से आप बात करना नहीं चाहते, आप केवल जुमलेबाजी करेंगे कि बम और वार्ता एक साथ नहीं हो सकती। बम और वार्ता साथ ही होती है न। सुंदरकांड में लिखा हुआ है कि 'भय बिन होय न प्रीति'। जिसको भी अमल में लाना है, उसको डर तो दिखाना पड़ेगा। लेकिन यह तो राजनीति और कूटनीति का काम है, यह अपना काम नहीं है।

परवेज मुशर्रफ दो बार आये। अटल जी करीब-करीब समझौते के करीब पहुंच गये थे, लेकिन आरएसएस के कहने पर आडवाणी जी ने उसे तुड़वा दिया। मुशर्रफ दोबारा मनमोहन सिंह के समय में आये। करीब-करीब समझौता हो गया था, लेकिन फिर उसमें अड़ंगा लग गया। यह दोनों देशों के दुर्भाग्य है। कश्मीर जाने पर समझ में आता है कि समस्या का समाधान हो चुका है, केवल दस्तखत करना बाकी है। वहां के स्थानीय लोग चाहते हैं कि हमारी जान आप छोड़िये। मैं तो हर एक से बात करता हूं। वहां के छात्र मिल गये। दो लड़कियां मिलीं। एक लॉ में जाना चाहती है, एक व्यापार में जाना चाहती है। जैसे बाकी हिन्दुस्तान कैसा हो। कश्मीर में अमन और चैन है। वहां पर बदतमीली है ही नहीं। हम तो दिल्ली मुम्बई में रहते हैं, यहां हर आदमी चिल्लाने को तैयार है, सब कोई झगड़ा करने को तैयार बैठा है। हम जितनी जल्दी कश्मीर मामले को हल कर लें, उतना ही अच्छा होगा। 1958 में अयूब खान ने पाकिस्तान को टेकओवर किया था। उन्होंने 1959 में इस सबकॉन्टिनेंट के ज्वाइंट डिफेंस को लेकर जवाहरलाल नेहरू को ऑफर दिया था। लेकिन उस समय नेहरू का चीन से बहुत लगाव था। उन्होंने ऑफर ठुकरा दिया। जनरल थिमैया आर्मी चीफ थे। उन्होंने इस्तीफा दे दिया और कहा कि आपने गलत फैसला लिया। लम्हे खता करते हैं और सदियां सजा पाती हैं। खैर, वो मौका तो गया। उसके बाद दो और मौके आये जिसे भी हमने खो दिया। आज भी पाकिस्तान के साथ व्यापार होता है। जहां प्रतिबंध लगाया था, वहां भी होता है। हमें पूरी पाकिस्तान नीति और कश्मीर नीति पर दोबारा से सोचना चाहिए। इसके लिए सभी पार्टियां को मिलकर बातचीत करनी चाहिए। आज कोई और सत्ता में है, कल कोई और आयेगा, लेकिन यह सबकी समस्या है। जब भी मौका मिले, जो भी प्रधानमंत्री हो, इस मुद्दे को प्रमुखता से लेकर पाकिस्तान से बातचीत करनी चाहिए। हम अपना ज्यादा पैसा शिक्षा, स्वास्थ्य और तरक्की के अन्य माध्यमों पर खर्च करें, ना कि एक दूसरे को गोली मारने में, बंदूकें और टैंक खरीदने में।

मैं तो उनमें से हूं, जो चाहते हैं कि भारत पाकिस्तान के बीच से वीजा हटा देना चाहिए। वीजा के नियम इतने कठिन हैं कि आज लखनऊ में रहने वाला कोई पोता, लाहौर में रहने वाली अपनी दादी से नहीं मिल सकता। जिन्हें यहां आकर तोड़-फोड़ करना है, वो तो हमारी सरकार से वीजा मांगते ही नहीं हैं। वे तो समुद्र के रास्ते आकर अपना काम करके चले जाते हैं। दिक्कत उन्हें होती है, जो शरीफ लोग हैं, जिनके पास इतना पैसा नहीं है कि वे

लखनऊ के पास के गांव से लाहौर पहुंचकर अपनी खाला, बुआ या दादी से मिल सकें। इनमें क्या वैमनस्यता हो सकती है। इसे इंसानियत की दृष्टि से देखिये। मुझे तो लगता है कि कश्मीर को लेकर भारत-पाकिस्तान के बीच मुद्दा हल हो गया है। दोनों के बीच एक लाइन खिंची हुई है। आधा कश्मीर उनके पास है, आधा हमारे पास। तीसरे क्लास का एक छात्र भी बता देगा कि कोई भी अपनी जमीन हमें नहीं देगा। अब बस इसको अमली जामा पहनाने की जरूरत है। केवल नेशनल फॉरम में अपनी-अपनी बातें कहते रहने से स्थिति का समाधान नहीं होगा। अयूब खान ने तो 1965 में ऐलान कर दिया था कि इतने दिन में श्रीनगर ले लेंगे। वे समझ रहे थे कि हिन्दू कायर हैं, लड़ नहीं सकेंगे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। 1971 में उन्हीं का आधा देश टूट गया और पूर्वी पाकिस्तान बांग्लादेश बन गया।

आज सरकार की कश्मीर पर क्या नीति है? मैं तो कश्मीर जाकर आ गया और इतनी अच्छी जगह को हमने जैसा बना रखा है, उसे लेकर मुझे अफसोस हैं हमने अपना ही गुलशन क्यों उजाड़ रखा है? गुजराल साहब के समय में एक लाहौर क्लब था, जहां कश्मीर समस्या पर सकारात्मक बातचीत होती थीं आज भी ऐसे पत्रकार हैं, जो मानते हैं कि भारत पाकिस्तान का रिश्ता ठीक होना चाहिए। कुलदीप नैयर इस समस्या को लेकर चिन्तित हैं और यह सिर्फ उनकी समस्या नहीं है। 15 अगस्त 1947 के पहले तो भारत पाकिस्तान एक ही था। तब दिल्ली में जमीन का कोई विवाद होता था, तो उसका फैसला लाहौर हाईकोर्ट करती थी। उस समय दिल्ली में हाईकोर्ट नहीं थी।

यहां हिन्दुत्व को लेकर बहस करने वाले जो लोग हैं, वे एक दिन हिन्दुस्तान को पाकिस्तान बना देंगे। बनाना है, तो हिन्दुस्तान को कश्मीर बनाइये। कश्मीरियत से कुछ सीखिए। अटल जी ने तो कहा था कि कश्मीरियत, इंसानियत और जम्हूरियत के दायरे में कश्मीर का समाधान करेंगे। आज की सरकार कम से कम अटल जी के रास्ते पर चलकर तो दिखाये। ❑

कश्मीर को राजनीतिक समस्या के रूप में देखिए

❑ शुजात बुखारी

प्रधानमंत्री का 20 मई का जम्मू-कश्मीर का एक दिवसीय दौरा उनके पिछले दौरों से थोड़ा अलग था। हालांकि इस बार भी उन्होंने कश्मीर मसले को राजनीतिक मसले की तरह नहीं देखा, लेकिन इसके बावजूद उनका रुख पहले से नरम था। पहले कश्मीर के तनावपूर्ण स्थिति से निपटने के मामले में उनका रुख सुरक्षा बलों की तरह था। कश्मीर में सेना और पुलिस पत्थर का जवाब गोली से देने में यकीन रखती है।

बहरहाल, नई दिल्ली ने रमजान से पहले अपना ट्रैक बदला और एक सशर्त संघर्ष विराम की घोषणा की, जिसमें मिलिटेंसी की विरुद्ध चल रहे ऑपरेशन को रोकने, लेकिन जवाबी कार्रवाई का विकल्प खुला रखने का फैसला किया था। प्रधानमंत्री मोदी ने गृह मंत्री राजनाथ सिंह द्वारा संघर्ष विराम की घोषणा का सार्वजनिक रूप से समर्थन कर उस धारणा को खारिज कर दिया, जिसके तहत यह माना जा रहा था कि वे इस मुद्दे पर खामोशी अख्तियार कर राजनीति करेंगे। लेकिन संघर्ष विराम के समर्थन के साथ-साथ मोदी ने कश्मीर में हजारों पत्थरबाज युवाओं की माफी की भी बात की। 2016 में बुरहान वानी की हत्या के बाद हुई हिंसा ने राजनाथ सिंह और मोदी की कश्मीर नीति को महत्त्वपूर्ण दोराहे पर ला दिया था। उस दौरान राजनाथ सिंह द्वारा कश्मीरी नौजवानों तक पहुंचने के प्रयासों को मोदी के करीबी समझ जाने वाले लोगों ने विफल बना दिया। उसके बाद राजनाथ सिंह खामोश हो गये थे। चूंकि रक्षा मंत्री निर्मला सीतारमण ने मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती के संघर्ष विराम की मांग को केवल तीन दिन पहले ही खारिज कर दिया था, लिहाजा संघर्ष विराम घोषणा राजनाथ सिंह द्वारा ही होना था। बहरहाल, मोदी ने न केवल इस मुद्दे पर लगायी जा रही सभी अटकलों को खारिज कर दिया, बल्कि युवाओं से मुख्यधारा में वापस लौटने की अपील भी की। मुख्यधारा से उनका आशय अपने परिवार वालों के पास घर लौटने से था। उनका यह दृष्टिकोण कश्मीर पर उनके अब तक के दृष्टिकोण से अलग था। एक साल पहले उन्होंने कश्मीरियों को दो विकल्प दिये थे। 3 अप्रैल 2017 को श्रीनगर-जम्मू राजमार्ग पर बने सुरंग के उद्घाटन समारोह को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि मैं कश्मीर के युवाओं को बताना चाहता हूं कि उनके पास दो ही रास्ते हैं। एक तरफ पर्यटन है और दूसरी तरफ आतंकवाद।

लेकिन इस बार उन्होंने कश्मीरी नौजवानों को विकास की पेशकश करते हुए उन्हें अपने घरों को वापस लौटने के लिए। अब सवाल यह उठता है कि क्या मोदी ने इस हद तक अपना रुख नरम कर लिया है? दरअसल, इसे क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर घटित हो रही कई घटनाओं की पृष्ठभूमि में देखा जाना चाहिए। बहरहाल, रुख में नरमी के बावजूद प्रधानमंत्री नई दिल्ली की उस मानसिकता से बाहर नहीं निकल पाये हैं, जो कश्मीर मसले को विकास, सुरक्षा और रणनीतिक चश्मे से देखती है। प्रधानमंत्री मोदी ने एक बार फिर पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के कश्मीरियत का उदाहरण दिया। 2014 के बाद कश्मीरियत का यह शायद

नौवां हवाला था, हालांकि इस बार उन्होंने जम्हूरियत और इंसानियत को अपने बयान से अलग रखा था। दरअसल, इस मामले में भी मोदी के कहने और करने में फर्क दिखा। उन्होंने कहा कि कश्मीर समस्या एक मात्र समाधान विकास, विकास और विकास है। कश्मीर में वर्ष 1990 और उससे पहले से चले आ रहे संघर्ष के इतिहास और विकास कार्यों की रौशनी में यह कहा जा सकता है कि वे गलत हैं, यदि विकास ही समस्या का समाधान होता तो खुद मोदी ने ही राज्य के लिए 7 नवंबर 2015 को 80 हजार करोड़ रुपये का एक बड़ा पैकेज देने का ऐलान किया था। हालांकि, यह बहस का विषय है कि उस पैकेज में से कितना पैसा आया, क्योंकि उसका बड़ा हिस्सा केन्द्रीय परियोजनाओं के लिए था। कहने का तात्पर्य यह है कि विकास के लिए दिये गये इस तरह के पैकजों ने जमीन पर प्रतिरोध को खत्म नहीं किया है।

यहां मिलिटेंसी के चरम, यानी वर्ष 1990 से 1996 के दौरान हुए विनाश को याद करना चाहिए। 1996 में जब फारूक अब्दुल्ला सत्ता में आये तो उन्होंने हजारों स्कूलों, अस्पतालों, पुलों और अन्य बुनियादी ढांचे के पुनर्निर्माण का बीड़ा उठाया। उन्होंने लगभग 1.5 लाख लोगों को नौकरियां भी दीं। लेकिन वह संघर्ष की राजनीति को बदल नहीं सके और 2002 का चुनाव भी हार गये। उनके बाद भी विकास के मंत्र का जाप किया गया, लेकिन सफलता नहीं मिली। अगर यह कदम ही लोगों को आजादी की मांग से अलग कर सकते, तो मोदी के 80 हजार करोड़ रुपये के पैकेज और 2015 के बाद सृजित की गयी नौकरियों के बाद कश्मीर में 2016 का हिंसात्मक विद्रोह-प्रदर्शन नहीं हुआ होता। तथ्य यह भी है कि हजारों युवा उसी सेना के भर्ती केन्द्रों की लाइनों में खड़े दिखे, जिन पर उन्होंने पत्थर फेंके। कश्मीरियों की यह कहानी दिल्ली की नजरों से ओझल नहीं है। मोदी का केवल विकास की बात करना जम्मू-कश्मीर के अतीत, वर्तमान और भविष्य से मेल नहीं खाता है। विकास का नारा तब तक कारगर साबित नहीं होगा जब तक कि इस समस्या के राजनीतिक चरित्र को स्वीकारा नहीं जाता है।

21 मई को शोपियां के एक गांव में सेना द्वारा आयोजित इफ्तार में घटी घटना यह जाहिर करती है कि कैसे कश्मीरी लोग सेना को अपनी सेना के रूप में नहीं देखते हैं। उन्होंने इफ्तार का विरोध किया। प्रदर्शन रोकने के लिए सेना ने फायरिंग की, जिसमें कई लोग घायल हो गये। अर्थात, दिल और दिमाग जीतने की यह लड़ाई पहले ही विफल हो गयी है। केन्द्रीय वार्ताकार दिनेश शर्मा (जिनका उल्लेख मोदी ने अपने भाषण में किया था) अधिकार और भूमिका की स्पष्टता के अभाव में घाटी में कोई सकारात्मक प्रभाव नहीं डाल सके। उन्हें खराब ट्रांसफार्मर बदलने और सड़कों को ठीक करने के लिए नहीं भेजा गया था। चूंकि उन्हें राजनीतिक मुद्दे पर बात करने के लिए अधिकृत नहीं किया गया था, इसलिए उनकी प्रासंगिकता पहले से ही सिमट चुकी थी। बहरहाल, कुछ ऐसे घटनाक्रम हैं, जिन्हें कश्मीर पर मोदी के कम कठोर रुख से जोड़कर देखने की जरूरत है। सबसे पहली यह कि घाटी में मुठभेड़ के दौरान नागरिकों की मौत पर सफाई देना कठिन साबित हो रहा है। दूसरा, ऑपरेशन ऑल आउट का उल्टा प्रभाव पड़ रहा है। इसलिए स्थिति का आंकलन करने के लिए संघर्ष विराम किया गया है।

रुख में बदलाव की एक और वजह पाकिस्तान के साथ शांति प्रक्रिया की सुगबुगाहट भी हो सकती है। यह सुगबुगाहट सबसे पहले दोनों देशों के सेना प्रमुखों के मेल-मिलाप वाले संदेशों में सामने आयी। पाकिस्तानी सेना द्वारा मसले के शांतिपूर्ण समाधान के संकेत दिये जाने को लेकर, जब 21 मई को रक्षा मंत्री निर्मला सीतारमण से सवाल पूछा गया तो उन्होंने कहा कि शांति की इच्छा जाहिर करने वाली किसी भी टिप्पणी को गंभीरता से लिया जायेगा। पिछले महीने नीमराना वार्ता शुरू होने के बाद ट्रैक-2 कूटनीति और अन्य बैक-चैनल कोशिशों से पता चलता है कि दिल्ली अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर तनाव के बावजूद बातचीत के लिए तैयार है। चूंकि 2019 के चुनावों से पहले मोदी के समक्ष कई मोर्चों पर दबाव है। वह चाहते हैं कि सार्क शिखर सम्मेलन आयोजित हो जाये। वे मतदाताओं को बयानबाजी के बजाए शांति परोसना पसंद कर सकते हैं। नेपाल और मालदीव के साथ संबंध के तार भी उनके रुख की तरफ संकेत कर रहे हैं। सार्क सम्मेलन के सफल आयोजन के लिए पाकिस्तान का शामिल होना जरूरी है। इसके लिए जरूरी है कि कश्मीर पर रुख नरम किया जाये। ऐसे में, अगले कुछ महीनों के घटनाक्रम पर नजर रखना दिलचस्प होगा। ❑

अशोक कुमार शरण सर्व सेवा संघ के प्रबंधक ट्रस्टी मनोनीत

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) की 19 जुलाई, 2018 को मदुरई (तमिलनाडु) की कार्यकारिणी बैठक में श्री अशोक कुमार शरण को सर्व सेवा संघ का प्रबंधक ट्रस्टी सर्वसम्मति से चुना गया है।

श्री शरण गांधी-विचार के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। सर्व सेवा संघ की खादी समिति के आप संयोजक रहे हैं और निष्ठापूर्वक खादी-कार्य के विकास के लिए अनवरत प्रयास करते रहे हैं।

गांधी विचारों की निष्ठा और विरासत अपने पिता श्री जलेश्वर नाथ शरण से ग्रहण की जो सेवाग्राम आश्रम में गांधीजी के साथ उनके रचनात्मक कार्य खादी से जुड़े रहे। गांधीजी और आश्रम के बारे में अपने पिता से सुनी छोटी-छोटी बातों और घटनाओं ने श्री शरण को गांधी-विचार के प्रति निष्ठावान कार्यकर्ता बना दिया।

आप अरुणाचल प्रदेश जैसे दूरस्थ राज्य में गांधी विचार के प्रसार-प्रचार के लिए काफी कार्य किया और संभवतः सर्व सेवा संघ के कार्यसमिति की बैठक प्रथम इस बार प्रदेश में अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर आयोजित की। इस अवसर पर ईटानगर में एक सफल पब्लिक मीटिंग का आयोजन किया। आपने 64 वर्ष के जीवन में उन्होंने विभिन्न संगठनों में कार्य किया।

–स. ज. प्रतिनिधि

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा' का जीवन सत्य

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। –सं.

कस्तूरबा से एक बार पूछा गया कि बापू के 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग' में आप कहां हैं? कस्तूरबा ने हंसकर कहा, 'मैंने पढ़ी तो नहीं, पढ़ ही नहीं सकती थी। मैं यह जानती हूं कि उन्होंने अनपढ़ होने का दायित्व दोनों के बीच बांटा है। मैं सजाकर रखी गयी एक मूर्ति की तरह, उसमें मौजूद हूं। बापू ने

उसमें मेरी सुन्दरता का बयान भी किया है और उपयोग का भी। बड़े दीवान जी के न रहने का कारण मैं ही हूं। बापू ने जो सत्य के साथ प्रयोग किये हैं, उन्हें मैंने भोगा है।' बा कभी-कभी सोचती थी कि क्या वह बापू के सच को नापने का मापक थी...या माध्यम?

बापू 1910 फरवरी को लंदन में वार्ता में असफल हो जाने के बाद पहली बार फीनिक्स आये तो कस्तूरबा उन्हें कमजोर लगी थी। उन्हें किसी से पता चला था कि थोड़ा रक्तस्राव उनके पीछे भी हुआ था। यह सुनकर वे चिन्तित हो उठे थे। हालांकि उस ऑपरेशन के बाद बा में ताकत आने लगी थी, पर दुबलापन पूरी तरह नहीं गया था। मोहनदास के लंदन चले जाने के बाद घर का पूरा काम बा ही देखती थी। दुबलापन, आराम और खानपान से जाता है। काम और आराम के बीच कोई संगति नहीं होती। जब बापू पूछते थे तो बा यही कहती थी, मैं कमजोर नहीं और न कम खाती हूं। मोहनदास चाहते थे कि कस्तूरबा काम-धाम की जिम्मेदारी कम से कम उठाये। वह जानती थी यह कैसे सम्भव है। उसने बात न काटकर दूसरी तरह से कहा, 'काम से स्वास्थ्य ठीक रहता है। वैसे भी अपने घर का काम अपना काम, आपने ही अपना काम अपने आप करने की शिक्षा दी है।' उन्होंने कहा तंदुरुस्ती पहले है। तंदुरुस्ती ठीक तो काम भी ठीक। मोहनदास के पास क्या खाना चाहिए क्या नहीं इस बारे में बताने को बहुत कुछ था। उन्होंने बताना शुरू किया क्या खाओ क्या नहीं खाओ। मटर, बीन्स, दालें तथा फलीदार सब्जियां खाना बंद कर दो। हालांकि मोहनदास और कस्तूरबा खाने के शौकीन थे। लेकिन इधर कुछ महीने से अपने स्वाद को दबाने का अभ्यास कर रहे थे। उनका मानना था कि हमारा खाना भौतिक आवश्यकताओं के लिए है। कस्तूरबा का विचार था खाओ सुख पाओ और देह बनाओ। बापू ने जब कहा कि तुम दाल खाना छोड़ दो। कस्तूर को दाल बहुत पसंद थी। यह सुनकर वह उत्तेजित हो गयी। उसने बात गंभीरता से न लेते हुए कह दिया, 'तुम क्यों नहीं उर्द की दाल छोड़ देते।'

कस्तूर ने सोचा भी नहीं था, जरा सी बात इतना बड़ा बखेड़ा खड़ा कर देगी। बापू खाने में उर्द की दाल और एक फलीदार सब्जी जरूर खाते थे। बिना किसी तरह की उत्तेजना दिखाए उन्होंने चुनौती स्वीकार करते हुए कहा, 'ठीक है, आज से मैंने दाल एक साल के लिए छोड़ दी।' बा अनासुर्ति में पकड़ी गयी थी, बोली, 'नहीं, मैंने तो हंसी में कहा था। मेरी वजह से तुम क्यों दंड भोगोगे। मेरे लिए तो मरन हो जायेगा।'

'यह हंसी नहीं गंभीर बात है, तुमने मुझे सीख दी है अगर मैं किसी से उसकी प्रिय वस्तु छोड़ने के लिए कहता हूं तो मुझे भी अपनी प्रिय वस्तु छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए। यही न्यायसंगत है।' 'मैं तुम्हें यह सब नहीं करने दूंगी। तुम्हें यह निर्णय वापिस लेना होगा। जो तुम कहोगे, मैं वही करूंगी।'

'मुंह से निकली बात क्या वापिस हो सकती है? बात मुंह से निकली नहीं कि जग की हुई। बिना किसी गलत इरादे के कही बात गलत नहीं होती। मैं जानता हूं, तुम इस प्रकार के भोजन से स्वस्थ रहोगी, उसका लाभ मुझे भी मिलेगा।' कस्तूरबा जानती थी कि भले ही दूसरे की बात सद्भावपूर्ण हो पर अपनी बात के कारण वे किसी भी तरह के

संघर्ष के पीछे नहीं हटते। उसी दिन से उन दोनों का बदला हुआ भोजन आरंभ हो गया। कुछ साल बाद एक रोज वह घटना मोहनदास को याद आयी तो वे पहले खूब हंसे फिर बोले, 'मैं आभारी हूं कि तुम्हारे कारण उस घटना ने मुझ झोलाछाप डॉक्टर की इज्जत बढ़ा दी।'

अक्टूबर 1910, कस्तूरबा के लिए बहुत तनाव भरा था। एक तो बीमारी, दूसरे सुस्वादु और पसंदीदा खाने से बेदखली। यह द्वन्द्व उसके दिमाग में काफी दिन तक चलता रहा था कि पति होने का मतलब यह तो नहीं कि वह खाने-पीने की आजादी छीन ले। अगर हंसी में भी किसी बात पर पत्नी असहमति जता दे तो पति नहले पर ऐसा दहला चला दे कि पत्नी से निगलते बने न उगलते। इसे व्यक्तिगत आजादी का हनन नहीं तो और क्या कहेंगे? जब पत्नी के नाम पर पति कुछ पसंदीदा चीजें खाना छोड़ेगा तो पत्नी के लिए कहां तक उचित है कि वह अपने स्वाद के लिए पति की बात को नकार दे। जब उसे पहली बार पता चला था कि डॉ. नान द्वारा दी गयी बीफ टी वाली बात मोहनदास ने उससे छिपाई थी तो वह उनसे कई दिन तक नाराज रही थी। उसके आत्मसम्मान को पहली बार चोट लगी थी। मोहनदास ने उसे समझाया था कि उस नाजुक हालत में तुम्हें वह पाप-कथा बताकर मैं तुम्हें हमेशा के लिए खोना नहीं चाहता था। उस समय तुम्हारे लिए बर्दाश्त करना सहज नहीं था। मैं डॉ. दम्पति की भावना पर शक नहीं कर सकता था, क्योंकि उस नाउम्मीदी की हालत में तुम्हें बचाने के लिए डॉ. दम्पति को जो सूझा उन्होंने किया। मैं भी डॉक्टर की मर्जी के खिलाफ तुम्हारी जिन्दगी को खतरे में डालकर और तुम्हारी हिम्मत को देखकर, तुम्हें फीनिक्स ले गया था। वह क्षण मेरे, तुम्हारे, हमारे और डॉक्टर के इतने पुराने संबंधों के लिए बड़ी चुनौती का था। इस सबके बाद कस्तूरबा के लिए कुछ भी कहना संभव नहीं था। मोहनदास ने उस समय कितनी सेवा की थी वह सब कस्तूरबा के सामने था। वैसे भी वह जानती कि संकट की स्थिति आ जाने पर बापू बड़े से बड़ा खतरा अकेले उठाने के आदी हैं। मुसीबतें आमंत्रित करना उनके स्वभाव में था। उसकी आंच घर-भर तक पहुंचती थी। यहां तक वह बच्चों के साथ भी न्याय नहीं कर पायी थी। हरिलाल डेढ़ साल से यहां है। वह बापू से कम समय फीनिक्स में रहा। अधिकतम समय उसने ट्रांसवाल की जेलों में गुजारा। चौदह महीने से सजा काट रहा है। उसकी पत्नी कितनी खिली रहती थी, अब वह जैसे बुझ-सी गयी है। जिसका पति पास न हो उस पर क्या बीतती है वह स्वयं इस दुःख को जानती और समझती है।

गुलाब को कैसे समझाये जब वह स्वयं उसकी उम्र की थी तो पति और बच्चों के बिना जीवन में कितना सन्नाटा था। वह भरे घर में कितना अकेला महसूस करती थी। क्या कस्तूर के भाग्य में भी यही लिखा है? जलचर पानी में बंधे रहते हैं। वनचर खुली वायु में घूमते हैं। हम स्त्रियां भी जलचर की तरह अपने अंदर जीती हैं। हरि फीनिक्स छोड़ते समय उससे कहकर गया था, लेकिन बार-बार पकड़े जाने और सजा पाने के कारण दिल दहल जाता है। उसने जाने क्यों दिया? मणिलाल जैसे शांत भले लड़के के बारे में सोचकर मन को झटका-सा लगता है। तीन महीने से सजा काट रहा है। जब रामदास और देवदास की तरफ देखती हूं तो डर जाती हूं, कल वे भी तय कर लेंगे कि उन्हें भी बाप के सत्याग्रह में शामिल होना है। चिड़िया के बच्चों की तरह उसे अकेला छोड़कर सब फुर्र हो जायेंगे। उसने आंखों के कोए मले और उठ गयी। अपने दर्द को स्वयं ही सहना था।

पदयात्रा

दक्षिण अफ्रीका में आंदोलन का रुख बदल गया था। मि. गांधी के कहने पर कोयला खानों के हजारों मजदूर काम छोड़कर बाहर आ गये थे। उन सबको छत और खाना देना एक बड़ी समस्या थी। मोहनदास को सूझा कि बच्चों, औरतों और उन सबको साथ लेकर, काले लोगों के ट्रांसवाल में आने-जाने के प्रतिबंधों के विरोध में, पदयात्रा निकालने का यह अच्छा मौका है। अगर गिरफ्तार हो गये तो सब जेल जायेंगे, खाने-पीने और रहने का प्रबंध सरकार करेगी। अगर गिरफ्तार नहीं हुए तो कैलनबैक के फार्म तक पदयात्रा करेंगे। विरोध का स्वर जनता के कानों तक जायेगा। कैलनबैक ने फार्म का एक हिस्सा, मि. गांधी को, टाल्सटाय फार्म स्थापित करने के लिए दे दिया था।

कस्तूरबा को भी रहने के लिए टाल्स्टाय फार्म ही जाना था। लेकिन क्वार्टर बनने में देर हो रही थी इसलिए उसका और बच्चों का वहां जाना कुछ हफ्तों के लिए स्थगित कर दिया गया था। चार साल से वह सपरिवार फीनिक्स के छोटे से घर में रह रही थीं इसलिए वही घर लगने लगा था। यही संतोष था कि लौटकर आने की संभावना बाकी थी। पड़ोसी रहेंगे ही, वह आती-जाती रहेगी।

9 अक्टूबर, 1910 को कस्तूरबा टाल्सटाय फार्म पहुंच पायी। पोलक के साथ अपने दोनों छोटे बच्चों को लेकर चली तो उन्हें ट्रांसवाल की सीमा पर रोक दिया गया। उनसे बदतमीली के साथ पूछताछ की जाने लगी। जब उन्हें बताया गया कि कस्तूरबा मि. एम. के. गांधी की पत्नी है तो जाने दिया गया। वहां जाकर पता चला कि हरिलाल फिर पकड़ लिया गया और अगले दिन उसे सजा सुनायी जायेगी। कस्तूरबा की समझ में नहीं आ रहा था वह क्या करे। वह सोचने लगी पता नहीं उसके भाग्य में कितना भटकना और तकलीफ लिखी है। वह हरिलाल से एक बार मिलना चाहती थी। उसे पता चला था बार-बार पकड़े जाने और सजा पाने ने उसे बदल दिया है।

...क्रमशः अगले अंक में

गतिविधियां एवं समाचार

प्राकृतिकि चिकित्सा दीक्षांत समारोह सम्पन्न

प्राकृतिक चिकित्सा समिति चंडीगढ़ के तत्त्वावधान में गांधी स्मरक भवन में प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग के छात्र-छात्राओं का प्रथम दीक्षांत समारोह 29 जुलाई 2018 को आयोजित किया गया। समारोह में मुख्य अतिथि बाबा फरीद विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. राजबहादुर ने लगभग 100 विद्यार्थियों को उनके डिप्लोमा प्रदान किये। इस अवसर पर डॉ. राजबहादुर ने कहा कि उन्हें बहुत खुशी है कि प्रथम दीक्षांत समाराहे में डिप्लोमा बांटने के लिए बुलाया गया, ये गांधी स्मारक भवन और उनकी जिन्दगी में मील का पत्थर साबि होगा। उन्हें खुलकर कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा प्राचीन समय से चली आ रही है। इस चिकित्सा की न केवल उन्होंने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की बल्कि बताया कि समुद्र मंथन के समय चौदह रत्नों में से धनवन्ती भी प्रकट हुए थे। जिन्होंने इस पद्धति को मानवीय चिकित्सा के लिए श्रेष्ठ बताया।

उल्लेखनीय है कि बाबा फरीद मेडिकल साइंस यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर डॉ. राजबहादुर किसी परिचय के मोहताज नहीं है। इस चिकित्सा के बारे में खुलासा करते हुए उन्होंने कहा कि यह परंपरा सदियों से चलन में है तथा पंचतत्त्व यानि भूमि, गगन, वायु, अग्नि, नीर से निर्मित है। शरीर को इन्हीं तत्त्वों में विकार होने से उत्पन्न बीमारियों को ठीक करके ही निरोग रखा जा सकता है।

डॉ. राज बहादुर ने यहां प्राकृतिक चिकित्सा की तारीफ की और कहा कि गंभीर बीमारी पर वह रोगी पर प्रयोग न कर उसे तुरन्त संबंधित डॉक्टर के पास भेजें। ये डिप्लोमा लेकर छात्र-छात्राएं इसे न केवल दीवार पर टांगें बल्कि इसका समाज के कल्याण के लिए प्रयोग करें। उन्होंने डिप्लोमा को डिग्री में बदलने के लिए किसी विश्वविद्यालय से जोड़ने के लिए मदद का आश्वासन दिया।

कार्यक्रम में विशेष अतिथि के तौर पर शामिल हुए निदेशक सूचना व लोकसंपर्क यू. टी. राकेश पोपली ने कहा कि ये प्राकृतिक चिकित्सा हर तरह से मददगार है तथा वे चंडीगढ़ के अलावा पंजाब के किसी यूनिवर्सिटी से संबंध करवाने में इसका प्रयास करेंगे।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में शारदा जी ने बताया कि प्राकृतिक चिकित्सा का इलाज करने के लिए पट्टीकल्याणा, पानीपत (हरियाणा) में एक अस्पताल चलाया जा रहा है। समिति के सचिव देवराज त्यागी ने इस मौके पर बताया कि पद्धति दिन-प्रतिदिन लोकप्रिय होती जा रही है। इस प्रथम दीक्षांत समारोह में अनेकों प्राकृतिक चिकित्सक, पत्रकार, समाजसेवक तथा कलाकार उपस्थित थे। मंच संचालन डॉ. दलजीत कौर ने किया।

इस अवसर पर उपस्थित विद्यार्थी काफी खुश थे तथा उन्होंने बताया कि इस चिकित्सा से जुड़कर उन्हें आंतरिक सकून मिला है। आने वाला समय इसी प्रणाली का है। ये न केवल स्वरूप तथा निरोग रखेगी बल्कि इसकी वे अपने भविष्य के रोजगार के तौर पर भी देख रहे हैं। **–देवराज त्यागी**

कश्मीर में शांति एवं लोकतंत्र की स्थापना

राष्ट्रीय संगोष्ठी

कश्मीर की चिन्ताजनक परिस्थिति से आप अवगत होंगे ही। सर्वोदय आंदोलन इससे चिन्तित है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने आज से दशकों पहले इस समस्या के समाधान हेतु पहल की थी, पर उन्हें पाकिस्तानी एजेण्ट एवं देशद्रोही कहा गया। आचार्य विनोबा ने 1959 में 4 महीने तक कश्मीर की यात्रा एवं 80 सभाएं की। उन्हें कश्मीर में आशा की किरण दिखी। उन्होंने कहा था–*''मजहब एवं सियासत के दिन लद गये, आये हैं दिन साइंस एवं रुहानियत के।''*

हम मानते हैं कि नागरिकों की जिम्मेवार पहल से इस समस्या का समाधान हो सकता है। इसी दृष्टि से यह राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गयी है।

इस संगोष्ठी में वरिष्ठ गांधीवादी विचारक डॉ. रामजी सिंह, कुलदीप नैयर (वरिष्ठ पत्रकार एवं अध्यक्ष, सिटीजन्स फॉर डेमोक्रेसी), संतोष भारतीय (संपादक, चौथी दुनिया), अभय दूबे (सीएसडीएस), श्री एस. पी. वर्मा (गांधी ग्लोबल फैमिली), मेजर जनरल तेज कौल, अराफा खानम (वायर), सुहासिनी हैदर (द हिन्दू), बशीर असद, संजय नाहर-पुणे (सरहद), संजय टिक्कू (कश्मीरी पंडित संघर्ष समिति), सईदा हमीद (भू.पू. सदस्य योजना आयोग), राममनोहर राय (नित्यनूतन ब्रॉडकास्ट), रवि नितेश (आगाज-ए-दोस्ती) आदि हमारा मार्गदर्शन करेंगे। इसके अतिरिक्त संगोष्ठी में गांधीवादी कार्यकर्ता, जम्मू-कश्मीर सहित पूरे देश के निर्दलीय सामाजिक संगठन, वरिष्ठ पत्रकार एवं निष्पक्ष नागरिक भाग लेंगे।

इस विषय एवं संगोष्ठी में रुचि रखने वाले साथी सर्व सेवा संघ प्रधान कार्यालय से संपर्क करें।

तारीख : 25 अगस्त 2018 (शनिवार) : सुबह 10.30 से शाम 5.00 बजे तक

स्थान : *गांधी शांति प्रतिष्ठान, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002* (आई.टी.ओ. मेट्रो स्टेशन, गेट नं. 1 एवं तिलक ब्रिज रेलवे स्टेशन के पास)

महादेव विद्रोही
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

टी. आर. एन. प्रभु
अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान

शेख हुसैन
महामंत्री, सर्व सेवा संघ

संपर्क : *मो. 9428825908, E-mail : president.sarvasevasangh@gmail.com /सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय, सेवाग्राम-441001, वर्धा (महा.) 07152-284061/284091, E-mail : sarvasevasangha@hotmail.com*

कविता

संविधान बनाम लोग

❑ माया गोविन्द

जहां कोई संविधान नहीं होता
वहां प्रजा का कभी भी कल्याण नहीं होता,
क्योंकि भ्रष्ट व्यवस्था का कोई
धर्म-ईमान नहीं होता। लेकिन,
भगवान भारत पर बहुत मेहरबान है
हमारा भारत महान है, क्योंकि
उसका एक संविधान है।
उस संविधान का एक मुख्य आधार है
न्याय हमारा मूलभूत अधिकार है।
किन्तु, जिस संविधान ने हमें यह
अधिकार दिया है, वो स्वयं कहां है?
जो संविधान चला रहे हैं
वही उसकी धज्जियां उड़ा रहे हैं।
जो भी नया राजा आता है,
धृतराष्ट्र हो जाता है
जो अपनी सुविधा के लिए
संशोधन के अधिकार आजमाता है।
वो धृतराष्ट्र एक नवाब है...
संशोधन उसका गुलाम है
धाराएं बांदियां हैं–फिर,
चलता रहता है संशोधन,
संशोधन पर संशोधन,
फिर उस पर, एक और संशोधन
इतने मास्क बदल जाते हैं कि,
असली चेहरा ही याद नहीं रहता,
फिर आप ही बताएं, जिनके पास
असली चेहरे हैं, वे कहां जाएं?
किससे पूछें कहां मिलता है न्याय?
सामाजिक, आर्थिक, वैधानिक न्याय
सारा शहर जन्मदिन के बैनरों से
पटा पड़ा है, लाखों गज कपड़ा रंगा पड़ा है
वहां जहां लाखों इंसान बिना कपड़े
नंगे पड़े हैं।
वे चिल्ला रहे हैं, अपनी फोटो छपवाओ
और एक कंबल इस ठंड में दे जाओ,
ताकि भूख से मर जाए लोकिन
ठंड से न मरे।
अनाज सरकारी गोदाम में सड़ जायेगा,
लेकिन भूख से मरते हुए किसी
भूखे के मुंह में नहीं आयेगा।
इसलिए तो आम आदमी भी आंखें
बंद किये रहता है,
और तुलसीदासजी की चौपाई कहता है।
कोई होऊ नृप हम ही का हानी
दासी छांड़ि न होउब रानी।
अर्थात, कोई भी राजा हो,
हमारी ही होनी है हानि
भला गुलाम भी कभी बादशाह बनता है?
हम सब ताश के वे पत्ते हैं
जो गुड्डियों में बंद हैं।
हम पैरों वाले लंगड़े, होश में रहकर
भी मतिमंद हैं।
एक बार सरकार, हो गई उदार और
हमें दे दिया सूचना का अधिकार
जब होने लगा उसका व्यवहार
जब खुलने लगे घोटालों के कारोबार
जब उस घेरे में आ गये फौजी,
न्यायाधीश, मंत्री, तंत्री और लालफीताशाही,
जब मचने लगी तबाही
तब सुना है व्यवस्था करने वाली है
कुछ ऐसी मुनादी...
हम सूचना के अधिकार में
एक ऐसा संशोधन लायेंगे
जिससे यह अधिकार पूरे सुलभ...
हो जायेंगे, कोई ऐसा उपचार आयेगा
हमसे सूचना का यह अधिकार छिन जायेगा।
लेकिन सुन लें आम से बने 'चंद' खास...
अब, लिखा जायेगा इतिहास
उन मोटी-मोटी गठरियों का
जो कोई जांच आयोगों की सौगात है
भ्रष्ट हत्यारी व्यवस्था की वारदात है।
मित्रों, क्या खुलेगा अब वह रहस्य
न्यायपालिका और कार्यपालिका के
बीच का संघर्ष और असामंजस्य
सभी कर रहे हैं, एक ही भूल
सभी भूलों के हैं शपथ का मूल
श्रेष्ठता की तुला पर अभिमान की
ओढ़कर चादर।
संसद और न्यायपालिका आमने-सामने
खड़े हो गये हैं।
महाभारत के योद्धा बनकर,
दोनों एक तुला पर बैठे हैं,
कौन झुके, कौन झुकाए?
तो जस्टिस कहां जाय?
जस्टिस डिलेड जस्टिस डिनाइड
बन चुका है एक मुहावरा
जेल बन चुके हैं पांच सितारा
होटल का पर्याय...
वाह रे राजनीतिक न्याय!
दाम दो, सुविधा लो,
कभी अदालत नहीं बैठती
कभी न्यायाधीश नहीं बैठता
बेचारा न्याय खड़ा रहता है
न्याय पर पर्दा पड़ा रहता है
जिसने अपनी बलात्कार पीड़िता बेटी
खोई है। वो रोता रहता है
पुलिस कहती है यह सब तो होता रहता है।
और हम क्या-क्या देखें।
हम पाकेटमार की कमाई देखें
या जिसकी जेब कटी है,
उसकी रुलाई देखें।
हे परवरदिगार,
दादा जब लगाता है कानून के सामने गुहार
तब उसके पोते को भी करना पड़ता है
फैसले का इंतजार।
न्याय पाने के लिए अब एक जनम
काफी नहीं है।
यह अन्याय है, अधिकारी की हत्या
है और इसकी माफी नहीं है।
अपराधियों के हौसले तब और बुलंद
हो जाते हैं।
जब अपराध के पक्के सबूत दफ्तरों
से खो जाते हैं।
जब अभिशाप ही वरदान हो जाये।
जब न्याय व्यवस्था स्वयं परेशान हो जाये।
जब अंधकार ही अंधकार उगलने लगेगा
रवि, तो कब तक चुप रहेगा कवि।
तो उठो, नींद तोड़ो ध्यान दो।
इकबाल जैसे दार्शनिक विचारक के
शब्दों को मान दो -
'ज़बाने-ख़ल्क को नक्कारा-ए-
ख़ुदा समझो।' अर्थात्
'जनवाणी ईश्वर की चेतावनी है।'
जिनकी जीवन पुस्तक में न्याय का
अध्याय नहीं, जहां अरबपति दिखाते हैं
उनकी कोई आय नहीं, ध्यान रहे,
यह मानव समाज कोई भेड़-
बकरियों का समुदाय नहीं।
और यह डूब मरने की बात है कि
मदिरालय में मदिरा है पर न्यायालय
में न्याय नहीं।
कुछ भी हो हमने उम्मीद नहीं हारी है
फोरम फॉर फास्ट जस्टिस की जंग
अभी जारी है। ❑

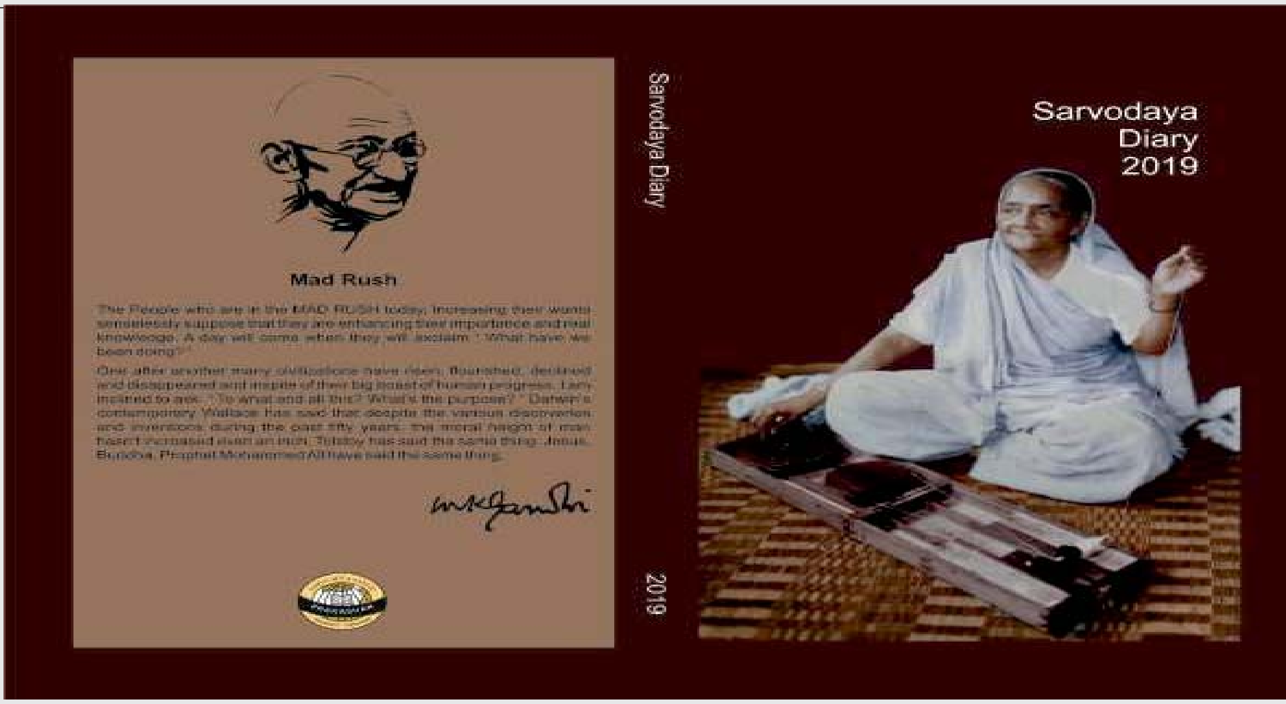

सर्वोदय दैनन्दिनी (डायरी) : 2019

आप जानते ही हैं कि सर्व सेवा संघ प्रकाशन **'सर्वोदय दैनन्दिनी'** नाम से डायरी का प्रकाशन विगत कई वर्षो से करता आ रहा है। इस वर्ष गांधी जयंती 2 अक्टूबर के अवसर पर 'सर्वोदय दैनन्दिनी (डायरी) : 2018' (हिन्दी व अंग्रेजी में) आपूर्ति के लिए उपलब्ध रहेगी।

गत वर्षों की भांति **'सर्वोदय दैनन्दिनी'** डबल डिमाई साइज में छापी गयी है। कागज, छपाई, बाइण्डिंग आदि के दरों में अत्यधिक वृद्धि होने के बावजूद भी दैनन्दिनी की कीमत मात्र रुपये 170/- ही निर्धारित है। **'सर्वोदय दैनन्दिनी :2019'** के प्रत्येक पृष्ठ पर गांधीजी की ज्ञानवर्धक व जीवनोपयोगी सूक्तियां (हिन्दी व अंग्रेजी) दी गयी हैं। डायरी का आवरण पृष्ठ अत्यधिक आकर्षक, रंगीन व जिल्द बाइण्डिंग तथा रोचक साज-सज्जा के साथ अच्छे कागज पर ऑफसेट द्वारा सुन्दर छपाई है।

डायरी विक्रेता एवं भेंट देने वाले शुभचिन्तक व सर्वोदय विचार प्रेमी साथियों से अनुरोध है कि अग्रिम क्रयादेश शीघ्र भिजवायें ताकि हम समय से आपको डायरी की आपूर्ति कर सकें। गत वर्ष देर से क्रयादेश भिजवाने वाले साथियों को हम डायरी की आपूर्ति नहीं कर पाये थे, जिसका दुःख है।

आपूर्ति के नियम

1. 1 से 100 डायरी मंगाने पर 25% कमीशन देय होगा, ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को देना होगा।
2. 101 से 250 डायरी मंगाने पर 30% कमीशन देय होगा। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को वहन करना पड़ेगा।
3. 251 से 350 डायरी एक साथ खरीद करने पर 35% कमीशन दिया जायेगा। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का खर्च का आधा एवं डाकखर्च ग्राहक को वहन करना पड़ेग।
4. 351 से अधिक डायरी मंगवाने पर 40% कमीशन एवं स्टेशन पहुंच की सुविधा दी जायेगी। ट्रांसपोर्ट द्वारा भिजवाने का आधा खर्च ग्राहक को देना होगा।
5. बिकी हुई डायरी वापस नहीं ली जायेगी।
6. डायरी की बिक्री पूर्णतया नकद, बैंक के मार्फत होती है।
7. आर्डर भिजवाते समय अपना नाम/पता/मोबाइल नं.और निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम साफ-साफ लिखें।
8. डायरी का आर्डर भिजवाते समय 25% रकम अग्रिम अवश्य भिजवायें। डिमाण्ड-ड्राफ्ट 'सर्व सेवा संघ प्रकाशन' के नाम भेजें।
9. रेलगाड़ी की सुविधा नहीं होने पर ट्रांसपोर्ट से पार्सल भेजने के लिए प्रकाशन स्वतन्त्र होगा।

नोटः रेलवे के असुविधाजनक नये नियमों के कारण पार्सल ट्रांसपोर्ट से मंगाना बेहतर होगा। समुचित अपेक्षा के साथ!

–अरविन्द अंजुम, प्रकाशक

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : अशोक मोती।